ऋग्वेद ओ३म् यजुर्वेद

पवमान

(मासिक)

मूल्य: ₹ 20

वर्ष : 31 भाद्रपद-आश्विन वि0स0 2076 अंक : 9 सितम्बर 2019

मुद्रक: सरस्वती प्रेस, देहरादून वजन: 50 ग्राम

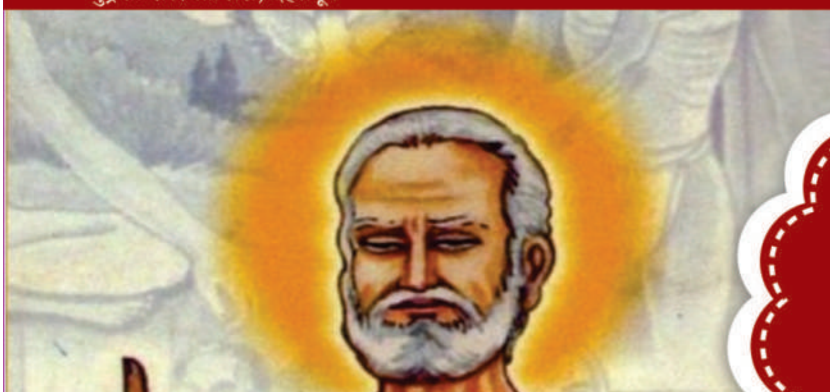

शरदुत्सव

16 अक्टूबर 2019
से
20 अक्टूबर 2019 तक

आप सभी सादर आमंत्रित हैं।

स्वामी विरजानन्द सरस्वती

(सन् 1778– सन् 1868)

की पुण्य स्मृति पर

शत्-शत् नमन

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, नालापानी, देहरादून-248008

सामवेद अथर्ववेद

पवमान पत्रिका हमारी वेबसाइट www.vaidicsadhanashramdehradun.com पर भी उपलब्ध है।

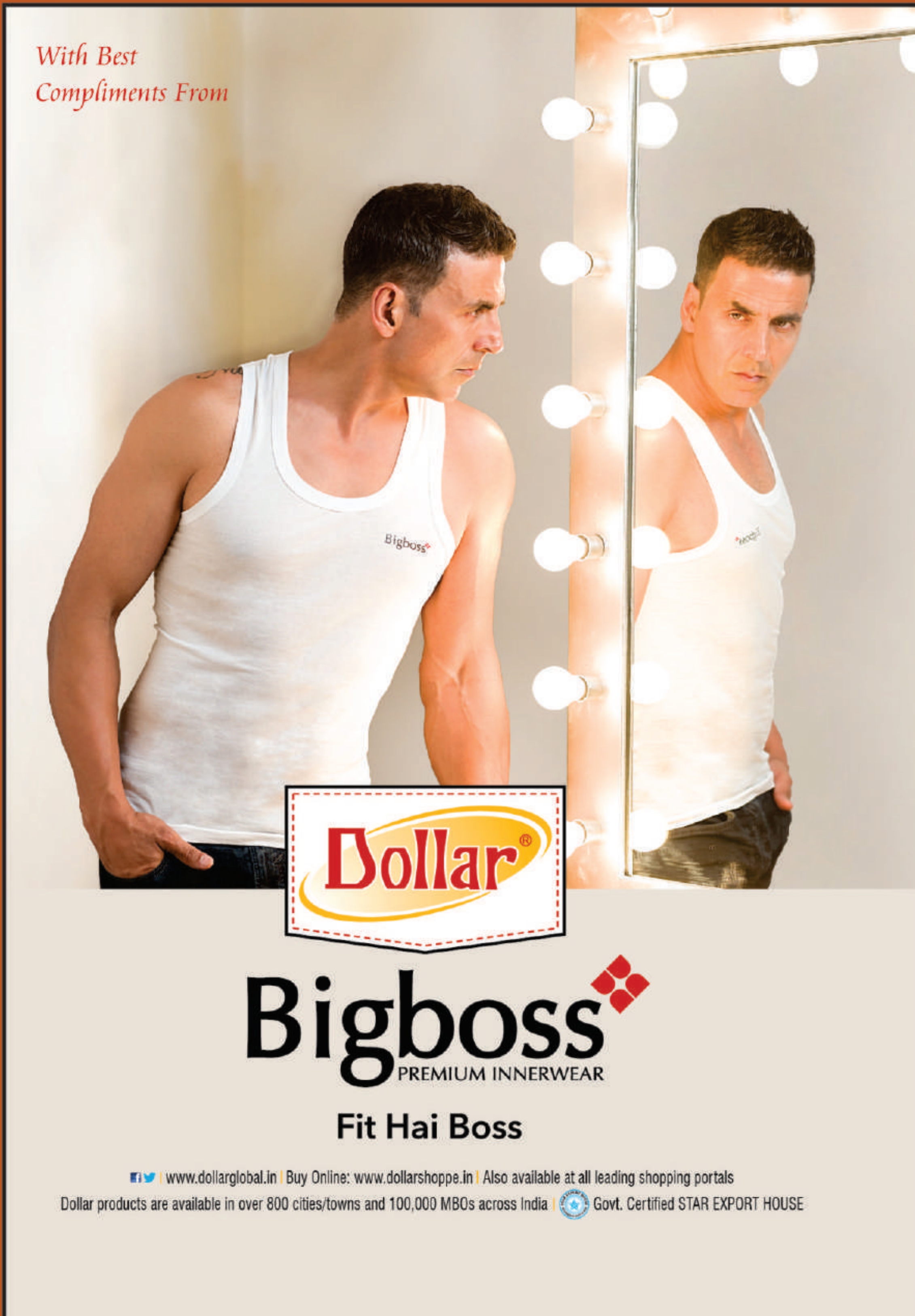

With Best
Compliments From
Bigboss
Dollar®
Bigboss
PREMIUM INNERWEAR
Fit Hai Boss
www.dollarglobal.in | Buy Online: www.dollarshoppe.in | Also available at all leading shopping portals
Dollar products are available in over 800 cities/towns and 100,000 MBOs across India | Govt. Certified STAR EXPORT HOUSE

ओ३म्

पवमान

वर्ष—31 अंक—9

भाद्रपद—आश्विन 2076 विक्रमी सितम्बर 2019

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,120 दयानन्दाब्द : 195

★

—: संरक्षक :—

स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती

मो. : 9410102568

★

—: अध्यक्ष :—

श्री दर्शनकुमार अग्निहोत्री

मो. : 09810033799

★

—: सचिव :—

प्रेम प्रकाश शर्मा

मो. : 9412051586

★

—: आद्य सम्पादक :—

स्व0 श्री देवदत्त बाली

★

—: मुख्य सम्पादक :—

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

अवैतनिक

मो. : 9336225967

★

—: सम्पादक मण्डल :—

अवैतनिक

आचार्य आशीष दर्शनाचार्य

मनमोहन कुमार आर्य

★

—: कार्यालय :—

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन,

तपोवन मार्ग, देहरादून—248008

दूरभाष : 0135—2787001

मोबाईल : 7310641586

Email : vaidicsadanashram88@gmail.com

Web-www.vaidicsadhanashramdehradun.com

विषयानुक्रम

शरदुत्सव 2019 का कार्यक्रम		2
सम्पादकीय	डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री	4
त्रैतवाद का सिद्धान्त	डॉ० कृष्णकांत वैदिक शास्त्री	5
श्रीकृष्ण और शाल्व के युद्ध का वर्णन	मनमोहन कुमार आर्य	8
स्वामी दयानन्द की शिक्षा विरजानन्द.....	मनमोहन कुमार आर्य	11
यम—नियम	आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार	15
महावीर हनुमान का आत्म विश्वास	ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी	18
वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय	स्वामी यतीश्वरानन्द जी महाराज	21
आद्य धर्मग्रन्थ वेदों का हिन्दी में प्रचार....	मनमोहन कुमार आर्य	24
क्या बनना चाहते हो? पुरुष या स्त्री!	महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती	27
प्रार्थना	वेदरत्न, प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार	29
गृहस्थ उत्थान के वैदिक उपाय	स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी	30
दानदाताओं की सूची		31

वैदिक साधन आश्रम तपोवन, देहरादून के बैंक खातों का विवरण

दान हेतु बैंक खाते का नाम	बैंक का नाम व पता	बैंक अकाउन्ट नं.	IFSC Code
आश्रम को दान देने के लिये			
1. "वैदिक साधन आश्रम"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101001530	CNRB0002162
पवमान पत्रिका शुल्क			
2. "पवमान"	केनरा बैंक, क्लाक टावर ब्रांच देहरादून	2162101021169	CNRB0002162
सत्संग भवन एवं आरोग्य धाम के निर्माण में सहयोग हेतु			
3. "वैदिक साधन आश्रम"	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स 17 राजपुर रोड, देहरादून	00022010029560	ORBC0100002
तपोवन विद्यानिकेतन स्कूल के लिये			
4. 'तपोवन विद्या निकेतन"	यूनियन बैंक, तपोवन रोड, नालापानी, देहरादून	602402010003171	UBIN0560243

पवमान पत्रिका में विज्ञापन के रेट्स

1. कलर्ड फुल पेज — रु. 5000/— प्रति माह
2. ब्लैक एण्ड व्हाईट फुल पेज — रु. 2000/— प्रति माह
3. ब्लैक एण्ड व्हाईट हॉफ पेज — रु. 1000/— प्रति माह

सदस्यों के लिए पवमान पत्रिका के रेट्स

1. वार्षिक मूल्य (12 प्रतियाँ प्रति वर्ष) — रु. 200/— वार्षिक
2. 15 वर्ष (आजीवन) के लिए मूल्य — रु. 2000/—

नोटः पवमान पत्रिका फुटकर विक्रय के लिए उपलब्ध नहीं है।

पवमान में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार सम्बन्धित लेखक के हैं। सम्पादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद के प्रतिवाद हेतु न्यायक्षेत्र देहरादून ही होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जायेगी।

वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

नालापानी, देहरादून - 248008, दूरभाष: 0135-2787001

शरदुत्सव (अथर्ववेद यज्ञ एवं योग साधना शिविर)

कार्तिक कृष्ण पक्ष तृतीया से कार्तिक कृष्ण पक्ष षष्ठी तक

तद्नुसार बुधवार 16 अक्टूबर से रविवार 20 अक्टूबर 2019 तक मनाया जायेगा।

यज्ञ के ब्रह्मा एवं योग-साधना निदेशक : स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी महाराज

प्रवचनकर्ता	: आचार्य उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ एवं स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी
वेद पाठ	: महर्षि दयानन्द आर्ष ज्योर्तिमठ गुरूकुल पौंधा देहरादून के ब्रह्मचारियों द्वारा
यज्ञ एवं कार्यक्रम संयोजक	: श्री शैलेश मुनि सत्यार्थी हरिद्वार
यज्ञ के व्यवस्थापक	: पंडित सूरतराम शर्मा जी
भजनोपदेशक	: पं. सत्यपाल पथिक, पं. रुवेल सिंह आर्यवीर
संगीतकार	: श्रीमती मीनाक्षी पंवार एवं श्रीमती लीना जी

बुधवार 16 अक्टूबर से रविवार 20 अक्टूबर 2019 तक प्रतिदिन

योग साधना	: प्रातः 5.00 बजे से 6.00 बजे तक
संध्या एवं यज्ञ	: प्रातः 6.30 बजे से 8.30 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	: प्रातः 10.00 बजे से 12.00 बजे तक
यज्ञ एवं संध्या	: सायं 3.30 बजे से 6.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	: रात्रि 7.30 बजे से 9.30 बजे तक

बुधवार 16 अक्टूबर 2019

ध्वजारोहण	: प्रातः 9.00 बजे **विषय :** आर्य समाज का ध्वज ओ३म् ही क्यों
यज्ञ के यजमान	: श्री विजय सचदेवा एवं परिवार
तपोवन विद्या निकेतन जूनियर हाईस्कूल का वार्षिकोत्सव	: विद्यालय के छात्र-छात्राओं द्वारा सांस्कृतिक प्रस्तुति प्रधानाचार्य जी द्वारा वार्षिक रिपोर्ट का प्रस्तुतिकरण "परिवार, समाज एवं राष्ट्र कैसे शक्तिशाली बनें" विषय पर विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों द्वारा विचार प्रस्तुति
प्रवचन विषय	: सांय : सुखी जीवन का आधार पंच महा यज्ञ 1. ब्रह्म यज्ञ 2. देव यज्ञ 3. अतिथि यज्ञ 4. पितृ यज्ञ 5. बलिवैश्वदेव यज्ञ
वक्ता	: पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, पं. सूरत राम शर्मा एवं स्वामी वेदानन्द सरस्वती
भजन	: पं. सत्यपाल पथिक, पं. रूवेल सिंह आर्यवीर

गुरूवार 17 अक्टूबर 2019

भजन	: प्रातः 10.00 बजे से पं. सत्यपाल पथिक एवं पं. उम्मेद सिंह विशारद द्वारा
प्रवचन	: महर्षि दयानन्द जी के जीवन की विशेषताएं
वक्ता	: पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ एवं पं. शैलेश मुनि सत्यार्थी
भजन एवं प्रवचन	: सांय 7.30 से 9.30 बजे तक, श्रीमती लीना जी द्वारा भजन प्रस्तुति
प्रवचन विषय	: स्वतंत्रता प्राप्ति में आर्य समाज की भूमिका
वक्ता	: पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ एवं पं. पीयूष शास्त्री

शुक्रवार 18 अक्टूबर 2019

महिला सम्मेलन	:	प्रातः 10.00 बजे से दोपहर 1.00 बजे तक
भजन एवं प्रवचन	:	श्रीमती मीनाक्षी पंवार एवं पं. रूवेल सिंह आर्यवीर
प्रवचन विषय	:	क्या नारी ही श्रेष्ठ परिवार की निर्मात्री है ?
वक्ता	:	आचार्या डॉ. अन्नपूर्णा, आचार्या डॉ. सुखदा सोलंकी एवं श्रीमती सरोज आर्या
कार्यक्रम संचालक	:	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा
भजन एवं प्रवचन	:	सांय 7.30 बजे से 9.30 बजे तक
भजनोपदेशक	:	पं. सत्यपाल पथिक एवं श्रीमती मीनाक्षी पंवार
प्रवचन विषय	:	वैदिक त्रैतवाद क्या है ?
वक्ता	:	पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ और आचार्य डॉ. धनंजय

शनिवार 19 अक्टूबर 2019

तपोभूमि के लिए शोभा यात्रा	:	प्रातः 7.00 बजे से 12.30 बजे तक, यज्ञ, भजन एवं प्रवचन के प्रातःकालीन समस्त कार्यक्रम तपोभूमि में सम्पन्न होंगे
भजन	:	पं. सत्यपाल पथिक, पं. रूवेल सिंह आर्यवीर एवं अतिथि कलाकारों द्वारा
प्रवचन विषय	:	दान प्रकृति का ऋत नियम है।
वक्ता	:	पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, पं. वेद वसु शास्त्री एवं स्वामी वेदानन्द सरस्वती
कवि सम्मेलन	:	रात्रि 8.00 बजे से 11.00 बजे तक
मुख्य अतिथि	:	डॉ. रमेश पोखरियाल 'निशंक', केन्द्रीय शिक्षा मंत्री, भारत सरकार
अध्यक्ष	:	डॉ. आनन्द सुमन
संयोजक	:	प्रो. (डॉ.) सारस्वत मोहन मनीषी
कविगण	:	धर्मेश अविचल, बागी चाचा, सत्येन्द्र सत्यार्थी, सुधा शुद्धि, मो. इकबाल

रविवार 20 अक्टूबर 2019

समापन समारोह	:	प्रातः 10.00 बजे से दोपहर 1.00 बजे तक
मुख्य अतिथि	:	माला राज्यलक्ष्मी शाह, सांसद, लोकसभा
विशिष्ठ अतिथि	:	श्री उमेश शर्मा 'काऊ', विधायक, रायुपर, देहरादून
सभाध्यक्ष	:	श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री
अतिथियों का स्वागत	:	आश्रम के सचिव इं. प्रेम प्रकाश शर्मा द्वारा अतिथियों का स्वागत एवं आश्रम द्वारा संचालित गतिविधियों की संक्षिप्त रिपोर्ट
भजन एवं प्रवचन	:	पं. सत्यपाल पथिक, पं. रूवेल सिंह आर्यवीर, द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरूकुल की ब्रह्मचारिणियों द्वारा भजन प्रस्तुति
प्रवचन विषय	:	भारत को विश्वगुरू बनाने के लिए धर्म आधारित राजनीति आवश्यक क्यो?
वक्ता	:	पं. उमेश चन्द्र कुलश्रेष्ठ, आचार्या डॉ. अन्नपूर्णा, स्वामी वेदानन्द सरस्वती
सम्बोधन	:	अतिथियों द्वारा सम्बोधन
धन्यवाद ज्ञापन	:	आश्रम के अध्यक्ष श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री द्वारा धन्यवाद ज्ञापन
ऋषिलंगर	:	समापन समारोह के उपरान्त ऋषिलंगर की व्यवस्था

सप्रेम आमंत्रण

आदरणीय महोदय/महोदया, स्व. बाबा गुरुमुख सिंह जी एवं पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती जी, स्वामी योगेश्वरानन्द जी परमहंस एवं महात्मा प्रभु आश्रित जी ने तपोवन आश्रम को साधना के लिए सर्वश्रेष्ठ स्थान माना था। आपसे प्रार्थना है कि परिवार व ईष्ट मित्रों सहित यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित होकर हमें कृतार्थ करें एवं अपने-अपने समाज/धार्मिक सत्संगों से यह निमंत्रण हमारी ओर से निवेदित करने की कृपा करें। आपके उदार सहयोग के लिए अग्रिम धन्यवाद।

निवेदक

दर्शन कुमार अग्निहोत्री, ई. प्रेम प्रकाश शर्मा, आचार्य आशीष जी दर्शनाचार्य, स्वामी चित्तेश्वरानन्द जी, सुधीर कुमार माटा, मंजीत सिंह, विक्रम बावा, योगेश मुंजाल, डॉ. शशि वर्मा, अशोक कुमार वर्मा, महेन्द्र सिंह चौहान, योगराज अरोड़ा, विजय कुमार, रामभज मदान, विनेश आहुजा।

एवं समस्त सदस्य, वैदिक साधन आश्रम सोसायटी

सरस्वती प्रेस, देहरादून। 9358865676

सम्पादकीय

परमात्मा का सत्य स्वरूप और आर्यसमाज

परमात्मा के गुण, कर्म और स्वभाव अनन्त है। इसलिए उसके नाम भी अनन्त है। परमात्मा का एक नाम सत्यनारायण है। परमात्मा को नारायण क्यों कहते हैं, इस सम्बन्ध में महर्षि मनु ने कहा है–'आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः। ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः' अर्थात् जल और जीवों का नाम नारा है। अयन या निवास स्थान है जिसका, इसलिए सब जीवों में व्यापक परमात्मा का नाम नारायण है। प्रलयकाल में सब जीवों का निवास स्थान होने से भी परमात्मा को नारायण करते हैं। कुछ वस्तुएं जैसे जीवादि स्वरूप से नित्य हैं अर्थात् आदि काल से उपस्थित हैं व अनन्त तक रहेंगी और कुछ प्रवाह नित्य हो अर्थात् यह भी आदि से अनन्त तक रहती है परन्तु इसके स्परूप में परिवर्तन होता रहता है। जैसे सृष्टि आदि सब तत्त्वों का आधार होने से परमेश्वर को नारायण कहते हैं। परमेश्वर का कोई आकार नहीं है। वह सर्वव्यापी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र, सर्वान्तर्यामी और सृष्टिकर्ता है।

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने वेद में सत्य की महिमा को देखते हुए ही आर्यसमाज के दस नियमों में से एक नियम सत्य पर ही केन्द्रित करते हुए बनाया है, जिसमें कहा गया है–''सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सदा उद्यत रहना चाहिए।'' महर्षि दयानन्द का सत्य के प्रति अत्यंत अनुग्रह होने के कारण ही उनके द्वारा सत्यार्थप्रकाश नामक ग्रन्थ की रचना की गई और उसकी भूमिका में लिखा गया कि ''जो सत्य है उसको सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाय। किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना लिखना और मानना सत्य कहाता है।'' आर्यसमाज के सिद्धान्तों में सत्य का ज्ञान और सत्य आचरण करना बहुत ही आवश्यक अंग हैं। जब हम किसी को अपना धर्म स्वीकार करने के लिए कहते हैं तो उसका यह अधिकार है कि वह जो धर्म अपनाने जा रहा है, उसकी पूरी तरह से समीक्षा या समालोचना करे। यह जांच परख कर ले कि यह धर्म स्वीकार करने योग्य भी है या नहीं? क्या किसी व्यक्ति को धर्म के पैगम्बरों के नाम सुन कर विश्वास कर लेना चाहिए या धर्म को अभ्युदय और निःश्रेयस सिद्धि की कसौटी पर कस कर स्वीकार करना चाहिए। उसे धर्म के प्रत्येक सिद्धान्त को लेकर जांच कर लेनी चाहिए कि ये उसे कहां तक लाभ या हानि पहुंचा सकते हैं। वैदिकधर्मी तर्क को ऋषि मानते हैं। भगवान् मनु ने भी मनुस्मृति में तर्क को ऋषि मानते हुए लिखा है कि ''जो व्यक्ति तर्क के द्वारा खोज करता है, वही धर्म को जान सकता है, दूसरा नहीं।'' आर्यसमाज त्रैतवाद को मानता है और उसके अनुसार ईश्वर, जीव और जगत् ये तीन पदार्थ अनादि हैं। इन तीनों के गुण, कर्म और स्वभाव भी अनादि हैं। त्रैतवाद का सिद्धान्त और आर्यसमाज की अन्य मान्यताओं को सत्य की कसौटी पर भली भांति परखा जा सकता है। इस दृष्टि से परमात्मा के सत्य स्वरूप को समझने वाला आर्यसमाज और उसके सिद्धान्त ही अनुकरणीय हैं।

डॉ० कृष्ण कान्त वैदिक शास्त्री

त्रैतवाद का सिद्धान्त

—डॉ० कृष्णकांत वैदिक

त्रैतवादियों का कहना है कि किसी वस्तु का निर्माण करने के लिए तीन कारणों का होना आवश्यक है। ये हैं— उपादान कारण, निमित्त कारण और साधारण कारण। ये समवायी कारण, निमित्त कारण और असमवायी कारण भी कहे जाते हैं। यदि हम घड़े का उदाहरण लें तो उपादान कारण वह है जिसके बिना घड़ा न बन सके और जो स्वयं रूप बदल कर घड़ा बन जाए। इस परिभाषा के अनुसार मिट्टी घड़े का उपादान कारण कही जाएगी। निमित्त कारण वह है जिसके बनाने से कुछ बने और न बनाने से न बने, आप बने नहीं, दूसरे को प्रकारान्तर से बना दे। इस परिभाषा से कुम्हार घड़े का निमित्त कारण कहा जाएगा। असमवायी या साधारण कारण वह है जो किसी वस्तु के बनाने में साधन हो। इस परिभाषा से कुम्हार का गोल चाक आदि घड़े के निर्माण में साधारण कारण कहे जाएंगे। इस दृष्टि से देखा जाए तो सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति या परमाणु हैं। यह उपादान कारण न हों तो सृष्टि नहीं बन सकती है। वेदान्तियों के कथनानुसार ब्रह्म स्वयं सृष्टि का उपादान कारण है जिसे वे सृष्टि का अभिन्न–निमित्तोपादान कारण कहते हैं। उनके अनुसार सृष्टि का उपादान तथा निमित्त कारण एक–साथ है। परन्तु ब्रह्म सृष्टि का उपादान कारण नहीं हो सकता है क्योंकि यह नियम है कि कारण में जो गुण होते हैं वे कार्य में आते हैं— 'कारण गुण पूर्वकः कार्य गुणो दृष्ट'ः। अगर ब्रह्म सृष्टि का उपादान कारण होता जैसे सृष्टि भंगुर है, सविकार है, वैसे ब्रह्म भी भंगुर होता, सविकार होता। जैसे ब्रह्म चेतन है, वैसे ही सृष्टि भी चेतन होती। ब्रह्म तो न भंगुर है, न सविकार है, न सृष्टि चेतनस्वरूप है। इसलिए प्रकृति ही सृष्टि का उपादान कारण हो सकती है क्योंकि वही घड़े को बनाने में मिट्टी की तरह सृष्टि को बनाने में रूप बदल कर स्वयं सृष्टि बन जाती है। सृष्टि का उपादान कारण प्रकृति है, परन्तु निमित्त कारण ब्रह्म या ईश्वर है। निमित्त कारण वह होता है जिसके बनाने से कुछ बने, न बनाने से न बने, स्वयं बने नहीं, दूसरे को बना दे। जैसे कुम्हार मिट्टी से घड़ा बनाता है, उसके बनाने से घड़ा बनता है, न बनाने से नहीं बनता, घड़ा तो बन जाता है, कुम्हार स्वयं नहीं बनता। ठीक वैसे ही ब्रह्म या ईश्वर से प्रकृति से सृष्टि बनाता है। इसलिए वह सृष्टि का निमित्त कारण है। जैसे घड़े का उद्देश्य पानी भरना है, वैसे ही सृष्टि का उद्देश्य जीवात्मा को कर्मफल देना है। प्रकृति, परमेश्वर के साथ जीवात्मा न हो तो सृष्टि का गोरखधन्धा एक लीला मात्र खेल रह जाता है। इन सब कारणों से सृष्टि की रचना में न एकत्ववाद से काम चलता है, न द्वित्ववाद से काम चलता है। त्रित्ववाद से ही इस समस्या का समाधान हो सकता है। यही कारण है कि एकत्ववादी वेदान्त ने भी सीधे तौर पर नहीं परन्तु टेढ़े तौर पर, द्वित्ववादी सांख्य ने मूक–भाषा में तथा वेदों ने सीधे तौर पर त्रैतवाद को स्वीकार किया है।

अब हम शांकर–वेदान्त, उपनिषद्, गीता, सांख्य और वेदों के आधार पर त्रैतवाद की समीक्षा करेंगेः–

(1) शांकर–वेदान्त में त्रैतवाद– शांकर वेदान्त में ब्रह्म के साथ माया को उसका अभिन्न अंग माना गया है। ब्रह्म की शक्ति को माना है और संसार को मिथ्या कहते हुए उसे परमार्थ–असत् कहने के साथ–साथ व्यवहार–सत् माना है, माया की उपाधि से विशिष्ट ब्रह्म को ईश्वर तथा जीव माना है। ब्रह्म ही अवस्था विशेष में 'जीव' है। एक होने पर अवस्था–विशेषों का द्वित्व या त्रित्च कैसे उत्पन्न हो गया? इसका केवल एक ही समाधान है– 'लीला'– परन्तु यह समाधान अस्पष्ट है व स्वीकार्य नहीं हो सकता है। वेदान्त में जो दृष्टान्त दिए जाते हैं, वे त्रित्ववाद को माने बिना समझ में नहीं आते हैं। उदाहरण के लिए रज्जु में सर्प की, शुक्ता में रजत की भ्रान्ति होती है, परन्तु प्रकाश से यह दूर हो जाती है। विचार करने से मालूम होता है कि रज्जु की सत्ता है, सर्प की भी सत्ता है, रजत की सत्ता है और शुक्ता की भी सत्ता है। अगर ब्रह्म में सृष्टि की रज्जु–सर्पवत् या शुक्ति–रजतवत् भ्रान्ति हो रही है, तो जिस सृष्टि की भ्रान्ति हो रही है, वह सृष्टि कहीं तो होनी चाहिए, जैसे रज्जु तथा सर्प की और शुक्ति तथा रजत की, इस सृष्टि में भ्रान्ति हो रही है, वह सृष्टि कहां है? इस सृष्टि को तो शंकर मिथ्या मानते हैं। संसार स्वप्नवत् है, जैसे स्वप्न में आदमी के सींग दीख जाते हैं, जागने पर यह स्वप्न टूट जाता है, वैसे यह मिथ्या जगत् एक स्वप्न है, जो आत्मबोध हो जाने पर भंग हो जाता है– यह कहना भी युक्तियुक्त नहीं है। स्वप्न में भी वही वस्तुएं दीख पड़ती हैं जिन्हें हमने जाग्रत अवस्था में असली रूप में देखा है या जाग्रत अवस्था में देखी चीजों का ही स्वप्न में बेमेलपना दीखने लगता है। हमें स्वप्न में जो कुछ दीखता है, उसकी असली सत्ता कहीं न कहीं होती ही है। जहां भ्रान्ति होती है, वहां तीन सत्ताएं अवश्य होती हैं। एक वह व्यक्ति जिसे भ्रान्ति हो रही है, दूसरी वह वस्तु जिसमें भ्रान्ति हो रही है, तीसरी वह वस्तु जिसकी भ्रान्ति हो रही है। उदाहरणार्थ, सीपी में चांदी की भ्रान्ति– मिथ्या प्रतीत हो रही है। इसमें तीनों तत्त्व मौजूद हैं। एक तत्त्व सीपी है जिसमें भ्रान्ति हो रही है। दूसरा तत्त्व चांदी है जिसकी भ्रान्ति हो रही है। तीसरा तत्त्व वह व्यक्ति है जिसे भ्रान्ति हो रही है। इन तीन तत्त्वों के बिना सीपी में चांदी की भ्रान्ति नहीं हो सकती। इसी को वेदान्त में 'व्यवहार–सत्' का नाम दिया गया है। परमार्थ में एक ही सत्ता है, व्यवहार में देखा जाता है कि एक ही जगह तीन मूलतत्त्व हैं। इस कारण से ही यह कहा जा सकता है कि वेदान्त में सीधे तौर पर नहीं, 'माया', 'उपाधि' और 'व्यवहार– सत्' आदि के द्वारा यह मान लिया गया है कि तीन मूलतत्त्वों को माने बिना काम नहीं चलता है।

(2) उपनिषदों, गीता और सांख्य के अनुसार त्रैतवादः– इन शास्त्रों में 'क्षर–अक्षर', क्षेत्र–क्षेत्रज्ञ' और 'प्रकृति–पुरुष' पदों का विवरण मिलता है। इसका अभिप्राय यह है कि इन शास्त्रों में 'क्षर', 'क्षेत्र' व 'प्रकृति' के नाम से एक 'जड़–मूलतत्त्व' को माना गया है, इसके अतिरिक्त 'अक्षर', 'क्षेत्रज्ञ' व 'पुरुष' के नाम से

एक 'चेतन–मूलतत्त्व' को भी माना गया है। 'चेतन–मूलतत्त्व' दो हैं– 'पिण्ड' में 'आत्मा' और 'ब्रह्माण्ड' में 'परमात्मा'। हम देखते हैं कि इन शास्त्रों में भी तीन मूलतत्त्वों का निर्देश है।

(3) वेदों के अनुसार त्रैतवादः– अनेक वेद मंत्रों का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि उनमें त्रैतवाद का वर्णन मिलता है। इनमें ऋग्वेद (01–164–20) का एक मंत्र निम्न प्रकार हैः–

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषष्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वादु अति अनश्नन् अन्यः अभिचाकशीति।।

इस मंत्र का भावार्थ यह है कि दो पक्षी हैं जो परस्पर साथ–साथ रहते हैं। दोनों एक ही वृक्ष का आलिंगन किए बैठे हैं। इन दोनों में से एक वृक्ष के फलों को खा–खाकर उनका स्वाद ले रहा है। दूसरा बिना खाए पहले पक्षी की गति–विधि का सूक्ष्म निरीक्षण कर रहा है। इस वर्णन में स्पष्ट रूप से पिण्ड में इस शरीर की तथा ब्रह्माण्ड में विशाल जगत् की उपमा दी गई है। यह जीव रूपी पक्षी पिण्ड में इन्द्रियों का तथा ब्रह्माण्ड में सांसारिक विषयों का मीठा–मीठा लुभावना भोग ले रहा है। दूसरा परमेश्वर–रूपी पक्षी जीवात्मा द्वारा किए गए भोग–रूपी कर्मों का फल देने के लिए उसकी गति–विधि को देखता रहता है।

त्रैतवाद वह सिद्धान्त है जो कहता है कि मूलभूत सत्ताएं तीन हैं। ये मूलभूत सत्ताएं हैं– ईश्वर, जीव और प्रकृति। वेदों में इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन है। रामानुजाचार्य और माधवाचार्य भी ईश्वर और जीव को अलग–अलग सत्ता मानते हैं। वर्तमान युग में महर्षि दयानन्द ने त्रैतवाद का प्रतिपादन किया है। वे श्वेताश्वर उपनिषद् के वचन से प्रमाणित करते हैं कि प्रकृति, जीव और परमात्मा तीनों अज हैं अर्थात् जिनका जन्म कभी नहीं होता। इस कारण से ये तीनों सब जगत् के कारण हैं। इनका कारण कोई नहीं है। इस आदि प्रकृति में अनादि जीव भोग करता हुआ फंसता है और उसमें परमात्मा न फंसता है और न उसका भोग करता है। प्रकृति का लक्षण करते हुए महर्षि सांख्य दर्शन के सूत्र का साक्ष्य देते हुए लिखते हैं कि शुद्ध, मध्य और जाड्य अर्थात् जड़ता तीन वस्तु मिलकर जो एक संघात है उसका नाम प्रकृति है। उसमें महत्तत्व बुद्धि, उसमें अहङ्कार, उसमें पांच तन्मात्रा सूक्ष्मभूत और दश इन्द्रियाँ तथा ग्यारहवाँ मन, पाँच तन्मात्राओं से पृथिव्यादि पाँच भूत ये चौबीस और पच्चीसवाँ पुरुष अर्थात् जीव और परमेश्वर हैं। इन में से प्रकृति अविकारिणी और महत्तत्व अहङ्कार तथा पाँच सूक्ष्मभूत प्रकृति का कार्य और इन्द्रियां मन तथा स्थूलभूतों का कारण है। पुरुष न किसी की प्रकृति उपदानकारण और न किसी का कार्य है। (श्वेता0 ४/५)

उपरोक्त विवेचन से यह प्रमाणित होता है कि त्रैतवाद का वैदिक सिद्धान्त तर्क की कसौटी पर पूर्णतः खरा उतरता है। इसमें किसी प्रकार की शंका किए जाने का कोई औचित्य नहीं रह जाता है।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व पर–

'श्रीकृष्ण और शाल्व के सौभनगर, अलवर में हुए युद्ध का वर्णन'

–मनमोहन कुमार आर्य

श्रीकृष्ण भारतीय संस्कृति के आदर्श पुरुषों में से एक हैं। महर्षि दयानन्द ने उन्हें आप्त पुरुष कहा है। महाभारत में उनका प्रशंसनीय इतिहास वर्णित है। उनका समस्त जीवन संघर्षों से भरा रहा। जन्म काल से ही उन्होंने ऐसे–ऐसे कार्य किये कि जिन्हें पढ़कर आश्चर्य होता है। महाभारत युद्ध में पांडवों को विजय प्राप्त हुई। इस महायुद्ध में पांडव पक्ष को प्राप्त हुई विजय में श्रीकृष्ण जी की ही प्रमुख भूमिका थी। आजकल स्वाध्याय व पढ़ने की प्रवृत्ति कम हो गई है। हमारे पौराणिक भाईयों और आर्यसमाज के अनुयायियों को भी श्रीकृष्ण जी के जीवन के बहुत से पक्षों का ज्ञान नहीं है। आर्य हिन्दुओं को यद्यपि कृष्ण उपदेश के रूप में गीता का ज्ञान तो है लेकिन श्रीकृष्ण जी के जीवन के अनेक उज्जवल पक्ष हमारी दृष्टि से ओझल रहते हैं। दूसरी ओर अन्य मतों के लोग अपनी साधारण बातों को बड़ी श्रद्धा व उत्साह से प्रचारित करते हैं। हम यदि नियमित स्वाध्याय करें तो हमारे ज्ञान में वृद्धि हो सकती है और संस्कृति सुरक्षित रह सकती है। आगामी 24 अगस्त, 2019 को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व आ रहा है। अतः इस अवसर पर हम श्रीकृष्ण जी के प्रबल विरोधी शिशुपाल के मित्र अलवर– नरेश शाल्व के द्वारका व अलवर में कृष्णजी के पुत्र प्रद्युम्न एवं श्रीकृष्ण जी के साथ हुए युद्धों पर प्रकाश डाल रहे हैं। हमने यह समस्त सामग्री आर्यसमाज के शीर्ष विद्वान पं० चमूपति जी की पुस्तक **'योगेश्वर कृष्ण'** से ली है। उनका अत्यन्त आभार है। हमें अलवर के युद्ध संबंधी सामग्री इस रूप में पूर्व पढ़े हुए किसी ग्रन्थ में देखने को नहीं मिली। अतः हम आशा करते हैं कि इससे पाठकों को लाभ होगा।

श्रीकृष्ण जी का शिशुपाल के साथी शाल्व के साथ अलवर में युद्ध हुआ था। इस युद्ध का महाभारत ग्रन्थ में वर्णन उपलब्ध है। प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् ऋषिभक्त पं० चमूपति जी बताते हैं कि युद्ध तो श्रीकृष्ण जी ने और भी अनेक किए थे परन्तु महाभारत में विस्तृत वर्णन इसी सौभनगर (अलवर) के युद्ध का पाया जाता है। भीष्म जी ने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के अवसर पर कहा था कि वहां उपस्थित राजाओं में कोई ऐसा राजा नहीं है जिसे कृष्ण जी जीत न सकते हों। महाभारत के दिग्विजय प्रकरण से यह सिद्ध है कि युधिष्ठिर के साम्राज्य में भारत के सारे राष्ट्र सम्मिलित थे। महाभारत के अनेक स्थलों मुख्यतः द्रोण पर्व के दसवें अध्याय में उन राज्यों की गणना की गई है जिन्हें कृष्ण जी ने नीचा दिखाया था। पं० चमूपति जी यह भी बताते हैं कि श्रीकृष्ण की इन विजयों का महाभारत में विस्तार नहीं दिया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि भिन्न–भिन्न निमित्तों से, यथा रुक्मिणी के हरण में, भारत के प्रायः सभी राजा कृष्ण जी के बल का लोहा मान चुके थे।

महाभारत इतिहास ग्रन्थ में श्रीकृष्ण और शाल्व के बीच युद्ध का वर्णन इस प्रकार है। आजकल जहां अलवर है, वहां पुराने समय में शाल्वपुर नाम का नगर था। उसके चारों ओर का राष्ट्र, जिसकी वह राजधानी था, मार्त्तिकावर्त या मृत्तिकावर्त कहलाता था। मर्त्तिकावर्त के राजा का नाम शाल्व था। उसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में शिशुपाल के वध का समाचार सुना तो झट आपे से बाहर हो गया। अभी श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ में ही थे कि शाल्व ने द्वारका पर चढ़ाई कर दी और श्रीकृष्ण को युद्ध का आह्वान देने लगा। द्वारका को जरासन्ध के आक्रमणों को लक्ष्य में रखकर बनाया गया था। द्वारका एक सुदृढ़ दुर्ग–सी थी। उसके चारों ओर द्वार थे। उन पर योद्धाओं की चौकियां थीं। यन्त्र रखे थे। सुरंगों की सुरक्षा का प्रबन्ध था। सब ओर मोर्चे लगे हुए थे। अट्टालिकाओं पर गोले रखे रहते थे। लड़ाई का सामान स्थान– स्थान पर विद्यमान था। सब ओर बुर्ज थे। बीच का बुर्ज ऊंचा था। वहां खड़े हुए पहरेदारों ने खबर दी की शत्रु आ रहा है। सारे राष्ट्र में आज्ञा हो गई कि सुरापान निषिद्ध है। युद्ध के समय मद्यपान की मनाही का यह अत्यन्त प्राचीन उदाहरण है। पुल तोड़ दिए गए। नौकाओं का आना–जाना बन्द हो गया। परिखाओं में सीखें डाल दी गईं। कुओं आदि की भी यही अवस्था की गई। नगर के चारों ओर एक कोस की दूरी तक भूमि पर कांटे डाल दिए गए और यह आज्ञा निकाली गई कि बिना मुद्रा (पासपोर्ट) के कोई आ–जा न सकेगा।

सेना लड़ने के लिए तैयार थी। सबको वेतन मिल चुका था और वह भी खरे सोने के सिक्कों में। सब युद्ध के अनुभवी थे। तात्कालिक भरती का यादवों में रिवाज न था। शस्त्रास्त्र से लैस होकर सब लड़ने को तैयार हो गए।

शाल्व का सबसे बड़ा बल एक उड़ता हुआ नगर था। श्मशानों और देवालयों को छोड़कर उसने द्वारका के बाहर डेरा लगाया। अपने विमान के साथ वह नगरी के चारों ओर घूमा। (रामायण में पुष्पक विमान का वर्णन तो हम पढ़ते हैं परन्तु महाभारत काल में अलवराधिपति शाल्व के पास अपना विमान था, इसका वर्णन शायद ही किसी को ज्ञात हो। महाभारत व उससे पूर्व हमारे पूर्वज विमान बनाने व उसके उपयोग से परिचित थे, यह इस उदाहरण से स्पष्ट है। –मनमोहन आर्य)

यादव वीर उद्यत ही थे। सबसे पूर्व सांब की शाल्व के सेनापति क्षेमवृद्धि से लड़ाई हुई। सांब ने उसे रणक्षेत्र से ही भगा दिया। वेगवान् ने उसका स्थान लिया, परन्तु वह मारा गया। विविन्ध्य चारुदेष्ण से भिड़ा, परन्तु प्रद्युम्न (श्रीकृष्ण के पुत्र) के बाण ने उसे पृथ्वी पर चित्त लिटा दिया। अब शाल्व ने स्वयं आक्रमण किया। प्रद्युम्न और शाल्व दोनों वीर थे। दोनों ने युद्ध–विद्या के जौहर दिखाये। पहले शाल्व को और फिर प्रद्युम्न को मूर्छा हुई। प्रद्युम्न का सारथि दारुकि था। वह रथ को रणक्षेत्र से निकाल कर एक ओर ले गया। इतने में प्रद्युम्न सचेत हुआ तो उसने दारुकि को झिड़का कि "यह क्या भीरुओं का कार्य किया? वह वृष्णि–कुल में पैदा ही नहीं हुआ जो युद्ध में पीठ दिखाए, या गिरे हुए पर और 'मैं तेरा हूं' ऐसा कहने वाले पर वार करे। स्त्री, बालक और वृद्ध पर आक्रमण करे, या भागे हुए अथवा जिस शत्रु का शस्त्र टूट गया हो, उस पर हमला

करे।'' दारुकि ने उसे फिर रणक्षेत्र में पहुंचा दिया। इस बार का युद्ध और भी बल–पराक्रम–पूर्वक हुआ। शाल्व को अधिक चोटें आयीं और वह मूर्छित हो गया। प्रद्युम्न उसका वध ही करने लगा था कि शाल्व ने घेरा उठा लिया और द्वारका से चला गया।

श्रीकृष्ण इन्द्रप्रस्थ से लौटे तो द्वारका में युद्ध के अवशेष अभी विद्यमान थे। पूछने पर पता लगा कि यह शाल्व की करतूत है। इन्होंने सेना लेकर मार्त्तिकावर्त पर धावा बोल दिया। वहां जाकर ज्ञात हुआ कि शाल्व अपने सौभ विमान के साथ समुद्र गया हुआ है। कृष्ण जी को लड़ना उसी से ही था। इन्होंने सीधा समुद्र का रास्ता लिया। इन्हें घाटा यह था कि शाल्व विमान पर था और श्रीकृष्ण नीचे धरती पर। पहले तो कृष्ण जी को अपने शस्त्र वहां तक पहुंचाने में कठिनाई हुई, परन्तु फिर इन्होंने इसका प्रबन्ध कर ही लिया। इस युद्ध में दोनों ओर से माया–युद्ध की प्रदर्शिनी हुई। दिन को रात और रात को दिन कर दिया जाता। स्वच्छ वातावरण मेघाच्छन्न हो जाता। सब ओर कोहरा छा जाता। पास खड़ा मनुष्य दिखाई न देता। इस माया का निवारण प्रज्ञास्त्र से होता, उससे बादल छिन्न–भिन्न हो जाते। एक बार किसी ने ऐसे ही कोहरे में अपने आपको द्वारकावासी बताकर श्रीकृष्ण को द्वारका–पति उग्रसेन का सन्देश दिया कि शाल्व ने वसुदेव को मार दिया है, आप लौट आइए। कृष्णजी कुछ समय तो अत्यन्त खिन्न रहे। इन्होंने सोचा, बलराम, प्रद्युम्न, सांब आदि के रहते हुए वसुदेव का बाल बांका न हो सकता था। संभव है, सभी मारे गए हों। यह सोचते–सोचते ये कुछ समय के लिए अचेत हो गए और इन्हें स्वप्न–सा दिखाई दिया कि वस्तुतः वसुदेव परलोक पहुंच गए और उनका शरीर किसी टूटे तारे की तरह नीचे गिर रहा है। इस दशा ने इन्हें और भी व्याकुल किया। परन्तु जब फिर सचेत हुए तो न वह द्वारकावासी था न वसुदेव का द्युलोक से गिरना। समझ गए कि वह गुप्तचर शाल्व ही का होगा। दारुक ने समझाया, महाराज ! शत्रु तो सभी अस्त्रों का प्रयोग कर रहा है, परन्तु आप हैं कि घातक शस्त्र नहीं चलाते। ऐसे शत्रु पर आग्नेय चक्र चलाना चाहिये। श्रीकृष्ण ने इस मन्त्रणा का औचित्य स्वीकार किया और पहले ही वार में शाल्व का सौभ विमान तोड़ गिराया। दूसरी बार स्वयं शाल्व पर शस्त्र फेंका। इस प्रकार शत्रु को उसके वायव्य दुर्ग–समेत नष्ट कर द्वारका लौटे।

इस प्रकार शाल्व के साथ युद्ध में श्रीकृष्ण की विजय हुई। हम आशा करते हैं कि हमारे पाठक मित्र इस ऐतिहासिक जानकारी से लाभान्वित होंगे। वह जब–जब श्रीकृष्ण जी के जीवन पर दृष्टि डालेंगे तो इस घटना को भी अपने मन में स्मरण करेंगे। ऐसे वर्णन पढ़कर हमारे भीतर उत्साह एवं शक्ति का संचार होता है। हम अपने गौरवमय अतीत से परिचित रहते हैं तो दूसरा कोई विधर्मी हमारे महापुरुषों की आलोचना करने का साहस नहीं कर सकता। हम श्रीकृष्ण के गुणों व जीवन आदर्शों को अपने जीवन में धारण करने का प्रयत्न करें। यही श्रीकृष्ण जी के जीवन को जानने व उसका अध्ययन करने का लाभ है।

स्वामी विरजानन्द जी की 151वी पुण्यतिथि 14 सितम्बर पर–

स्वामी दयानन्द का निर्माण स्वामी विरजानन्द की शिक्षा ने किया

–मनमोहन कुमार आर्य

ऋषि दयानन्द विश्व–दिग्विजयी ऋषि हैं। उन्होंने सभी मतों के आचार्यों को शंका समाधान, वार्ता तथा शास्त्रार्थ का अवसर देकर एवं साथ ही सभी मतों की शंकाओं का समाधान कर तथा 55 से अधिक शास्त्रार्थों में विजयी होकर वह विश्व गुरु व दिग्विजयी विद्वान् बने हैं। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश रूपी जो अनूठा धर्म–ग्रन्थ लिखा वह भी उन्हें विश्व गुरु सहित दिग्विजयी बनाता है। ऋषि दयानन्द ने अपने इस विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ में वैदिक सिद्धान्तों व मान्यताओं पर तर्क व युक्तियों सहित प्रकाश डाला है और प्रायः सभी विषयों पर उठने वाली शंकाओं का समाधान किया है। उन्होंने संसार के सभी मतों की समीक्षा कर उनमें अविद्या के अंश को भी सभी लोगों के सामने रखा है। उनकी समीक्षायें अकाट्य हैं जिनका समाधान विभिन्न मत–मतान्तरों के आचार्य नहीं कर पाये हैं। सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ के लेखन और वेद प्रचार कार्यों का उद्देश्य सत्य मान्यताओं व सिद्धान्तों के आधार पर देश व संसार के लोगों को संगठित करना था जिससे सब मित्र–बन्धु–कुटुम्बियों की तरह संसार में रहते हुए एक दूसरे के दुःखों के निवारण तथा सुखों में वृद्धि करने में सहयोगी बन सकें। स्वामी दयानन्द जी को यदि समझना है तो उन्हें उनके सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, पत्र और विज्ञापन, वेदभाष्य, ऋषि जीवन चरित आदि के माध्यम से जाना जा सकता है। वह संसार में किसी मनुष्य या मत के विरोधी नहीं थे परन्तु सत्य के अवश्य ही साधक व प्रचारक थे। ईश्वर, जीव व प्रकृति का सत्यस्वरूप उन्होंने उपस्थित किया है। वह ईश्वर के सत्यस्वरूप की मनुष्यों द्वारा उपासना करने के प्रति दृढ़ प्रतिज्ञ थे। उनका यह कार्य संसार के सभी कार्यों में सबसे महान प्रतीत होता है क्योंकि इससे मनुष्य का वर्तमान व शेष जीवन एवं मृत्यु के बाद का जीवन भी सुधरता व उन्नति को प्राप्त होता है।

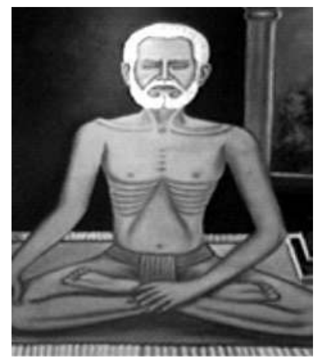

ऋषि दयानन्द को सद्ज्ञान से अलंकृत करने वाले उनके विद्यागुरु प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी विरजानन्द सरस्वती थे। स्वामी विरजानन्द जी ने दयानन्द जी को न केवल विद्यादान दिया अपितु उन्हें देशोपकार तथा विश्व में सत्य मत के प्रचार द्वारा सुख व शान्ति का विस्तार करने की प्रेरणा करने वाले भी वही थे। स्वामी विरजानन्द जी का जन्म सारस्वत ब्राह्मण कुल में पिता श्री नारायणदत्त शर्मा के घर पर अंग्रेजी वर्ष 1778 ईसवी अथवा विक्रम सम्वत् 1835 के उत्तरार्ध में पौष मास में हुआ

था। स्वामी विरजानन्द जी का जन्म स्थान जालन्धर नगर का करतारपुर कस्बे का गंगापुर ग्राम है। बचपन में ढाई से छः वर्ष की अवस्था के बीच आपको शीतला रोग हुआ था जिससे आपकी नेत्र–ज्योति नष्ट प्रायः हो गई थी। विरजानन्द जी को उर्दू–फारसी के लेखन–पठन का सम्यक् ज्ञान था। ऐसा भी अनुमान किया जाता है कि विरजानन्द जी की नेत्रज्योति उनकी 6 वर्ष की अवस्था के कुछ समय बाद नष्ट हुई थी। विरजानन्द जी के पिता संस्कृत के विद्वान थे। इन्होंने अपने पिता से ही संस्कृत का आरम्भिक ज्ञान प्राप्त किया था। पिता के देहान्त से पूर्व आपने अमर–कोष कण्ठस्थ कर लिया था। सारस्वत व्याकरण को हलन्त पुल्लिंग तक साधनिका सहित आप पढ़ चुके थे। यह भी अनुमान किया जाता है कि विरजानन्द जी ने घर पर कुछ पंचतन्त्र एवं हितोपदेश भी पढ़ा था। उन्होंने जब घर छोड़ा था तो वह संस्कृत–भाषण कर लेते थे। इस समय से ही इन्होंने संस्कृत को अपने व्यवहार की भाषा बना लिया था। विरजानन्द जी के पिता के देहान्त के स्वल्प काल बाद माताजी का भी देहावसान हो गया था। आयु के बारहवें वर्ष में वह अपने भाई व भावज के आश्रित हो गये थे। भाई–भावज को इनके प्रति कर्तव्यों का निर्वाह करने में किसी प्रकार का उत्साह नहीं था। स्वामी विरजानन्द जी के जीवनीकार पं० भीमसेन शास्त्री लिखते हैं कि भाई– भावज के दुर्व्यवहार की मात्रा बढ़ती गई। विरजानन्द जी बचपन से ही तेजस्वी, आत्मगौरव के भाव से पूर्ण और उग्र प्रकृति के थे। भाई–भावज के व्यवहार से कुपित व दुःखी होकर विरजानन्द जी ने अपने ग्राम गंगापुर का त्याग कर दिया था और वह ऋषिकेश पहुंच गये थे। ऋषिकेश में आपने गंगा नदी में खड़े होकर लम्बी अवधि तक गायत्री मन्त्र का जप किया। तीन वर्ष ऋषिकेश में रहते हुए आपने गंगा नदी में खड़े होकर गायत्री जप आदि कार्य किये। एक दिन आपने रात्रि में स्वप्न देखा। स्वप्न में 'आपने सुना कि कोई कह रहा है कि तुम्हारा जो होना था हो चुका। अब तुम यहां से चले जाओ।' इसके बाद निद्रा भंग हो गई। आपने स्वप्न पर विचार किया और ऋषिकेश से हरिद्वार आ गये।

हरिद्वार में आपने स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती जी से सन्यास आश्रम की दीक्षा ली और साधक युवक ब्रजलाल से स्वामी विरजानन्द बन गये। स्वामी विरजानन्द जी ने संवत् 1856 से 1868 तक 12 वर्ष काशी में निवास किया। काशी से आप धर्मनगरी 'गया' पहुंचे और वहां संवत् 1868 से 1871 तक तीन वर्ष रहे। इसके बाद आप कोलकत्ता गये और यहां सम्वत् 1872 से 1878 तक लगभग 6 वर्ष तक रहे। काशी आदि स्थानों पर आपने अपने अध्ययन का विस्तार किया। कोलकत्ता से आप हरिद्वार पहुंचे थे और वहां से सोरों आकर यहां ठहरे। हरिद्वार में आप अपने संन्यास गुरु स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से भी मिले थे। ऐसा अनुमान किया जाता है कि पूर्णानन्द जी अपने शिष्य विरजानन्द जी की विद्या की उन्नति की बातें जानकर प्रसन्न एवं सन्तुष्ट हुए होंगे। स्वामी विरजानन्द जी सोरों से अलवर पहुंचे और वहां से पुनः सोरों आये। कुछ समय सोरों रुककर आप मथुरा आ गये जहां आपने सन् 1845 ईसवी में वह संस्कृत पाठशाला खोली जहां सन् 1860 में आकर स्वामी दयानन्द ने तीन वर्ष आपसे आर्ष व्याकरण एवं शास्त्रीय ग्रन्थों का अध्ययन किया था। मथुरा आने का कारण यह था कि यहां संस्कृत की अनेक पाठशालायें थी। 800 से 1200 बच्चे संस्कृत का अध्ययन करते थे। यहां अन्य स्थानों से अधिक योग्य विद्यार्थी

उपलब्ध हो सकते थे। दानी महानुभाव भी यहां संस्कृत अध्यापन में सहायता देते थे। वह बालकों की पठन पाठन सहित भोजन के प्रबन्ध द्वारा सहायता करते थे। स्वामी विरजानन्द जी का लक्ष्य एक योग्य शिष्य प्राप्त करना व उसे अपना समस्त ज्ञान प्रदान करना भी था। यह सम्भावना उन्हें मथुरा में ही दिखाई दी थी। यहां आपके विद्याध्ययन काल के दो सहपाठी भी निवास करते थे जिनका आमंत्रण आपको प्राप्त होता रहता था। यही सब कारण मथुरा आकर पाठशाला खोलने व अध्यापन कराने की भूमिका बने थे।

स्वामी दयानन्द जी योग्यतम गुरु स्वामी विरजानन्द जी के योग्यतम व अपूर्व शिष्य थे। स्वामी दयानन्द जी के विरजानन्द जी के पास मथुरा पहुंचने की कथा का वर्णन हम पं० भीमसेन शास्त्री के शब्दों में कर रहे हैं। इसमें स्वामी दयानन्द के परिवारजनों का वर्णन भी सम्मिलित है। स्वामी दयानन्द जी का जन्म टंकारा, मोरवी राज्य के वैभटदार श्री कर्शनजी तिवारी के घर फाल्गुन बदि 10 शनिवार, मूल नक्षत्र में (12–2–1825 को) हुआ था। इनका नाम मूलशंकर रखा गया था। मूलशंकर के पश्चात् इनसे दो वर्ष छोटी बहिन थी, उसकी विशूचिका से मृत्यु हो गई। मृत्यु का भयंकर दृश्य प्रथम बार देख, इनका मन सांसारिक जीवन से हट गया। भगिनी की मृत्यु के 3 वर्ष पश्चात् इनके सुहृद चाचा की मृत्यु ने इनके वैराग्य को अति दृढ़ कर दिया। इनका विवाह होने को था कि इससे कुछ दिन पूर्व सं० 1903 के प्रारम्भ में गृहस्थ–बन्धन से बचने के लिये यह घर से चले गये और योगियों को ढूंढते फिरे। सायला में नैष्ठिक ब्रह्मचारी बन **'शुद्ध चैतन्य'** नाम पाया। कार्तिक स्नान के अवसर पर मूलशंकर सिद्धपुर पहुंचे। वहां इनके पिता ने इन्हें जा पकड़ा पर ये चौथी रात को फिर भाग गए। अनेक स्थानों पर विद्याग्रहण व राजयोग सीखते हुए सं0 1905 की ग्रीष्म ऋतु में चाणोदकन्याली में श्री परमानन्द सरस्वती से संन्यास लिया और दयानन्द सरस्वती नाम पाया। छः मास तक दण्ड धारण कर विसर्जन कर दिया। वे स्थान–स्थान पर जाकर विद्याग्रहण व योग–साधना परायण रहे। सम्वत् 1910 के आरम्भ में चाणोदकन्याली में दो अच्छे योगी ज्वालानन्द पुरी तथा शिवानन्द गिरि मिले। इन्होंने स्वामी दयानन्द की परीक्षा कर इन्हें अधिकारी जान योग की उत्तम शिक्षा दी। इसके उपरान्त आबू पर्वत पर योगाभ्यास करके कुछ और भी योग तत्वों को प्राप्त करते हुए ये सं० 1911 के अन्त में हरिद्वार के कुम्भ मेले पर पहुंचे। संवत् 1912 में ज्ञान सम्पन्न योगियों व गुरुओं की खोज में केदारनाथ, बदरीनाथ आदि की यात्रा की। इस यात्रा में जोशी मठ के शंकराचार्य ने इन्हें हरिद्वार में स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से पढ़ने की सम्मति दी। स्वामी दयानन्द उत्तराखण्ड के पर्वतों की यात्रा से लौटकर संवत् 1912 में लगभग 108 वर्ष के अतिवृद्ध स्वामी पूर्णानन्दजी के पास पहुंचे। वे अतिवृद्ध हो मौनी बन गये थे, पढ़ाते न थे। उन्होंने लिखकर दयानन्द को अपने शिष्य विरजानन्द जी के पास मथुरा जाने की प्रेरणा की।

स्वामी दयानन्द संवत् 1917 कार्तिक शुक्ला 2 बुधवार (14–11–1860) को विरजानन्द के शिष्य बने। उन्होंने इनसे व्याकरण व वेदानन्त–दर्शन का अध्ययन किया। व्याकरण के विशेष सूत्रों पर दार्शनिक

चर्चायें काशी के कौमुदी के अध्यापन में भी आती हैं। इन चर्चाओं का भी विस्तार–संकोच गुरु–शिष्य की योग्यतानुसार हो सकता है। जब विरजानन्द जैसे दार्शनिक गुरु थे और दयानन्द जैसे दार्शनिक शिष्य थे, तो दर्शन के प्रायः सभी मार्मिक स्थलों की आलोचना व्याकरण व वेदान्त के अध्ययन में ही आ गई होगी। दयानन्द के बुद्धि–विकास में विरजानन्द का विशेष भाग था। विरजानन्द व दयानन्द का संयोग मणि–कांचन था। दोनों ने परस्पर संयोग से अपने जीवनों को सफल माना।

विद्या समाप्ति पर, मुमुक्षुवय, अकिंचन दयानन्द सरस्वती गुरु–दक्षिणा–नियम–निर्वाहार्थ लौंगे, गुरु–दक्षिणा के रूप में लेकर उपस्थित हुए। विरजानन्द स्व–छात्रों से गुरुदक्षिणा के रूप में कुछ न लेते थे। वे बोले–''दयानन्द, तुम्हारी यह भक्तिपूर्ण भेंट स्वीकार है, रख दो। पर इतने मात्र से गुरु–दक्षिणा न होगी। गुरु–दक्षिणा में मुझे तुमसे कुछ और मांगना है, और वह तुम्हारे पास है भी। क्या तुम मेरी मांगी वस्तु मुझे दे सकोगे?'' दयानन्द बोले–''मेरा रोम–रोम आपके आदेशार्थ समर्पित है। आप निःसंकोच आदेश करिये।'' देश–दशा चिन्तित विरजानन्द ने कहा–''दयानन्द! देश में घोर अज्ञान फैला हुआ है। स्वार्थी लोग जनता को पथभ्रष्ट कर रहे हैं। तुम इस व्यापक अन्धकार के निवारणार्थ सर्वात्मना प्रयत्न करो। ''दयानन्द ने **''तथास्तु''** कहकर गुरु निर्देश को शिरोधार्य किया और सम्पूर्ण जीवन देशोद्धार में होम दिया। मोक्ष–प्राप्ति के स्थान में देशोद्धार मुख्य लक्ष्य बन गया। पं० भीमसेन शास्त्री द्वारा लिखित यह कथा स्वामी दयानन्द जी के विद्याध्ययन एवं देश हित में वेदों के पुनरुद्धार व उनके प्रचार की इतिहास–कथा है। गुरु–शिष्य के सान्निध्य ने देश का अपूर्व कल्याण किया और देश धार्मिक दृष्टि से अनिश्चितता के वातावरण से बाहर आया और अब विश्वगुरु बनने के पथ पर अग्रसर है।

स्वामी विरजानन्द जी का जीवन बहुआयामी था। उन्होंने अलवर नरेश को संस्कृत पढ़ाई थी। मथुरा की पाठशाला के लिये अलवर नरेश से आर्थिक सहायता भी प्राप्त होती थी। स्वामी विरजानन्द जी ने व्याकरणाचार्यों व पौराणिक मतों के आचार्यो से व्याकरण सम्बन्धी विषयों पर कई शास्त्रार्थ भी किये। देश के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम सन् 1857 में उनका गुप्त योगदान था, ऐसी चर्चा पढ़ने को मिलती है। स्थानाभाव से उन सबका उल्लेख सम्भव नहीं है। ईश्वर–भक्ति तथा आर्ष–ग्रन्थाध्ययन– अध्यापन की पवित्र साधना में अपना जीवन व्यतीत करते हुए नब्बे वर्ष की आयु में उदरशूल से पीड़ित रहते हुए संवत् 1925 आश्विन बदि 13, सोमवार (14–9–1868) को दण्डीजी ने मथुरा में अपनी विनश्वर देह का त्याग किया। स्वामी दयानन्द जी को जब यह समाचार शहबाजपुर में कार्तिक मास में मिला तो कहा जाता है कि वह इस वज्राहत समाचार को सुनकर स्तब्ध रह गये। कुछ देर बाद वह बोले 'व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया।' उस दिन दयानन्द जी ने जल भी ग्रहण नहीं किया था, ऐसा बताया जाता है। स्वामी दयानन्द का निर्माण स्वामी विरजानन्द की शिक्षा व सान्निध्य की देन थी। इन दोनों महापुरुषों को सादर नमन है। दयानन्द को पाकर वैदिक धर्म की रक्षा हुई है और देश का अपूर्व कल्याण हुआ है।

यम–नियम

–आचार्य रामप्रसाद वेदालंकार

यम–नियम एवं यम–नियमों में यमों की प्रधानता

यों तो योग मार्ग के पथिक के लिए साधना की राह के सच्चे राही के लिए ''यम–नियम'' दोनों की ही अत्यन्त आवश्यकता है, परन्तु इन में से भी यमों की अधिक प्रधानता है। जैसा कि महर्षि मनु ने कहा है–

यमान् सेवेत सततं न नित्यं नियमान्बुधः।
यमान्पतत्यकुर्वाणो नियमान्केवलान् भजन्।। (मनु0 ४।२०२)

(बुधः यमान् सततं सेवेत) विद्वान् यमों का सदा सेवन करे (न नित्यं नियमान्) केवल नियमों का ही नहीं। क्योंकि (यमान् अकुर्वाणः केवलान् नियमान् भजन् पतति) यमों का सेवन न करता हुआ जो केवल नियमों का ही सेवन करता रहता है, वह गिर जाता है, भ्रष्ट हो जाता है, अपने लक्ष्य से च्युत हो जाता है।

यमों को प्रधानता इस कारण से दी जाती है कि यदि साधक इनका अपने जीवन में जी–जान से पालन करता है तो इन अहिंसा, सत्य, अस्तेय आदि से उस के चहुं ओर के वातावरण पर, चहुं ओर के समाज और राष्ट्र पर बड़ा ही उत्तम प्रभाव पड़ता है। सारा समाज उस से सुखी होता है, तृप्त होता है, विश्वस्त होता है, निर्द्वन्द्व होता है। पर अगर वह इन यमों का अतिक्रमण करके केवल नियमों का ही पालन करता है, केवल शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय आदि का अनुष्ठान करता है तो इस से व्यक्तिगत रूप में तो उसे भले ही कुछ लाभ हो सकता है, परन्तु समाज को इससे कुछ विशेष लाभ नहीं होता। अतः यहां यमों को नियमों की अपेक्षा प्रधानता दी गई है। प्रकृत श्लोक के द्वितीय पात (न नित्यं नियमान् बुधः) से नियमों का निषेध नहीं समझना चाहिए, अपितु नियमों की अपेक्षा ''यमों'' की नित्यता, अधिक प्रधानता समझनी चाहिए।

याज्ञवल्क्य के मतानुसा–''ब्रह्मचर्य, दया, क्षमा, ध्यान, सत्य, अकुटिलता, अहिंसा, अचौर्य, मधुरता और इन्द्रिय–दमन''–ये १0 ''यम'' हैं, तथा ''स्नान, मौन, उपवास, यज्ञ, स्वाध्याय, इन्द्रिय–निग्रह, गुरुसेवा, पवित्रता, अक्रोध और अप्रमाद''–ये १0 ''नियम'' हैं।'

मेधातिथि तथा गोविन्दराज ने हिंसादि का त्याग ''यम'' और वेदाभ्यास ''नियम'' है, ऐसा (मनु0 १0।१४७) की व्याख्या में लिखा है। किसी आचार्य के मत में ''अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अकुटिलता और अचौर्य–ये ५ ''यम'' तथा ''अक्रोध, गुरुसेवा, पवित्रता, स्वल्पाहार और सदा प्रमाद–शून्यता'' ये ५ नियम हैं। और किसी के अनुसार अक्रूरता, क्षमा, सत्य, अहिंसा, इन्द्रिय–दमन, अस्पृहा, ध्यान, प्रसन्नता, मधुरता और सरलता''–ये १0 ''यम'' हैं। अहिंसा, सत्य–भाषण, ब्रह्मचर्य, अकुटिलता, अचौर्य, ये ५ उपव्रत ''यम'' हैं। पवित्रता, यज्ञ, दान, स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य, व्रत, उपवास, मौन और स्नान–ये १0 ''नियम'' हैं।

इस प्रकार यद्यपि ये ''यम–नियम'' अनेक आचार्यों के मत में भिन्न–भिन्न हैं, परन्तु महर्षि पतंजलि के मत में जो ''यम–नियम'' हैं, वे १0 हैं। ''पांच यम और पांच नियम''। धार्मिक जगत् में व योगी उपासक–साधक जनों के

संसार में जहां कहीं भी यम–नियमों की चर्चा की जाती है, वहां झट सब के द्वारा अर्थात् वक्ता और श्रोता दोनों के द्वारा सहज ही में यमों से महर्षि पतंजलि द्वारा प्रतिपादित अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह का तथा नियमों से शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर–प्रणिधान का ही ग्रहण किया जाता है। इन यम–नियमों में पूर्वाचार्यों से अभिहित प्रायः सभी यम–नियमों का किसी न किसी रूप में अन्तर्भाव हो ही जाता है। और फिर ये अध्यात्मजगत् में सर्वत्र प्रसिद्ध एवं सर्वग्राह्य भी हैं। अतः इन्हीं महर्षि पतंजलि प्रतिपादित १० यम–नियमों की ही यहां इस पुस्तक में सरल सुबोध रूप से संक्षिप्त चर्चा की जायेगी, संक्षिप्त व्याख्या की जायेगी।

महर्षि मनु के अनुसार एक साधक को चाहिए कि वह इन यम–नियमों का निरन्तर पालन करे, यमों की अवहेलना करने केवल नियमों के पालने में ही न लगा रहे। क्योंकि यमों का अतिक्रमण करके जो केवल नियमों के पालन में ही लगा रहता है, वह अपने उद्देश्य से गिर जाता है, अपने लक्ष्य से च्युत हो जाता है।

यम–नियम

योग के अंगों के अनुष्ठान से अशुद्धि के क्षीण हो जाने पर ज्ञान का प्रकाश विवेकख्याति पर्यन्त बढ़ता ही रहता है।

योग के अंगों के अनुष्ठान से चित्त के मल अर्थात् (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश रूप पांच पर्वों वाले) अशुद्धिरूप फिर सम्यक् ज्ञान की अभिव्यक्ति होती है। इसलिए जैसे–जैसे मनुष्य योग के अंगो का अनुष्ठान करता जाता है। वैसे–वैसे उस के चित्त का मल भी घुलता जाता है। वैसे–वैसे उस का चित्त भी निर्मल होता जाता है। वैसे–वैसे उस के भीतर ज्ञान की दीप्ति बढ़ती जाती है, ज्ञान का प्रकाश बढ़ता जाता है। और यह ज्ञान की दीप्ति भी उसमें तब तक बढ़ता जाता है जब तक कि मनुष्य को प्रकृति और पुरुष के स्वरूप का ज्ञान न हो जाए।

इस प्रकार इन योग के अगों का जो अनुष्ठान है यह जहां अशुद्धि के नाश का कारण है, वह जहां अशुद्धि के वियोग का कारण है, ऐसे जैसे कि फरसा–कुल्हाड़ा छेद्य–उखाड़ने योग्य लकड़ी के उच्छेद– उखाड़ने का कारण है, वहां वह विवेक–ज्ञान, सम्यक् ज्ञान का भी कारण है, ऐसे जैसे कि धर्म का आचरण दुःख के विनाश के साथ–साथ सुख का भी कारण है।

ये योगांग कौन से हैं–

यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावंगानि।। योग० २।२६

यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि ये उपासनायोग के आठ अंग हैं।

यद्यपि ये योग के आठों अंग ही विवेकज्ञान के लिए, प्रकृति और पुरुष की पहिचान के लिए, आत्मा ओर परमात्मा के साक्षात्कार के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। अर्थात् अपने जीवन के परम उद्देश्य की प्राप्ति के लिए इनमें से किसी की भी अवहेलना नहीं की जा सकती, इनमें से किसी का भी अपलाप नहीं किया जा सकता, इनमें से किसी की भी लापरवाही नहीं की जा सकती। परन्तु तो भी अनुभवी विद्वान् साधकों का अनुभव यही है कि इन योगांगों में से जो प्रथम २ अंग यम और नियम हैं, वे योग की रीढ़ की हड्डी समझे जाते हैं। अतः यदि इन दोनों की विशेष रूप से दृढ़तापूर्वक पालन न किया जाए तो योग की गाड़ी आगे चलती नहीं। यदि इन आधार रूप यम–नियमों को बड़ी दृढ़ता

और लगन से अपनाया न जाए तो फिर योग का, साधना का भवन खड़ा नहीं हो पाता। इसलिए योग के मार्ग के, साधना के पथ के प्रत्येक सच्चे पथिक का यह कर्त्तव्य है कि वह प्रयत्न पूर्वक जी–जान से इन यम–नियमों का पालन करे। क्योंकि जब वह इनका सच्चे हृदय से पालन करने लगेगा तो फिर अगले अंगों का पालन करना उसके लिए बड़ा ही सहज हो जायेगा, बड़ा ही सुगम हो जायेगा।

अब ये ''यम–नियम'' क्या हैं, इस पर जरा विचार करते हैं–

अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमाः।। योग० २।३०

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह, ये ५ यम कहलाते हैं। और

शौचसन्तोशतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः। योग० २।३०

शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान, ये नियम कहलाते हैं।

यम–नियम शब्दों पर विचार

अब इन ''यमों'' को यम और ''नियमों'' को नियम क्यों कहते हैं? यम विचारते हैं

''यम'' शब्द ''यम उपरमे'' धातु से बनता है। अतः 'यम' उन्हें कहते हैं जिनके अनुष्ठान के द्वारा इन्द्रियों को विषयों से पृथक् किया जाता है, हटाया जाता है। इस प्रकार यम (Negative) हैं, निषेधात्मक हैं। इसलिए साधक को चाहिए कि वह अपनी उन वृत्ति–प्रवृत्तियों को रोके, हटाए, पृथक् करे जो कि उस के साधना के मार्ग में बाधक हैं। अर्थात् उसे चाहिए कि सर्वप्रथम वह अपने घर के कूड़े करकट को निकाल बाहर करे, और उसे साफ–सुथरा बनाए। उसे साफ–सुथरा, स्वच्छ–निर्मल बनाने के लिए उसे चाहिए कि वह अहिंसा का पालन करे, अर्थात् वह कभी हिंसा न करें: सत्य का पालन करे, अर्थात् वह कभी स्तेय, चोरी न करे, ब्रह्मचर्य का पालन करे, सदा संयमी रहे, अर्थात् वह कभी व्यभिचार न करे, अपरिग्रह का पालन करे, अर्थात् वह कभी परिग्रह न करे, वह कभी संग्रह न करे।

इस प्रकार जब वह साधक मन, वचन और कर्म से हिंसा, असत्य भाषण, चोरी, व्यभिचार और परिग्रह–संग्रह की वृत्ति–प्रवित्तियों से अपने को पृथक् कर लेगा, हटा लेगा तो इस से उस का हृदय शुद्ध हो जायेगा। अब उसे चाहिए कि वह अपने शुद्ध हुए इस हृदय को नियमों से अलंकृत करे।

अब ''नियम'' उनको कहते हैं जिन को यमों के द्वारा अपने साफ–सुथरे, स्वच्छ–निर्मल हृदय में नियमित किया जाता है। अर्थात् ये नियम (Positive) हैं, विधेयात्मक हैं। यमों द्वारा स्वच्छ–निर्मल बने हुए हृदय को इन नियमों से अलंकृत किया जाता है। अतः साधकों को चाहिए कि वे नियमों अर्थात् शौच से अपने बाहर–भीतर को, अपने शरीर–मन को शुद्ध करें, सन्तोष, जो कुछ अपने कर्मों के आधार पर प्राप्त हो, उसी में ही संतुष्ट रहने का प्रयास करें, तन, मन, इन्द्रियों और शरीर को वश में रखने के लिए उचित रीति से तप करें, ताकि भूख–प्यास, सर्दी–गर्मी, मान–अपमान आदि द्वन्दों को सहज ही सहन कर सकें। स्वाध्याय–मोक्ष की ओर ले जाने वाले शास्त्रों का स्वाध्याय करें, ओंकार आदि का लक्ष्यभिमुख होकर जप करें। ईश्वर प्रणिधान अपने सर्व कर्मों को ईश्वरार्पण करें।

महावीर हनुमान का आत्म विश्वास

–ईश्वरी प्रसाद प्रेम जी

आध्यात्म रामायण में भी प्रायः इसी तरह का वर्णन है। वहां श्री हनुमान् जी आत्मविश्वास की वाणी में कहते हैं–

लंघयित्वा जलनिधिं कृत्वा लंका च भस्मसात्।
रावणं सकुलं हत्वाऽऽनेश्ये जनकनन्दिनीम्।
यद्वा वद्ध्वा गले रज्ज्वा रावणं वामपाणिना।
लंका सपर्वतां धृत्वा रामस्याग्रे क्षिपाम्यहम्।।
यद्वा दृष्ट्वैव यास्यामि जानकीं शुभलक्षणाम्।
(४।६ २२–२४)

वानरो! मैं समुद्र को लांघकर लंका को भस्म कर डालूँगा और रावण को कुल सहित मारकर श्री जनकनंदिनी को ले आऊँगा अथवा कहो तो रावण के गले में रस्सी डालकर तथा लंका को त्रिकूट पर्वत सहित बांये हाथ पर उठाकर भगवान् राम के आगे ला रखूँ? या शुभलक्षणा श्री जानकी जी को ही देखकर चला आऊं?

कितना आत्मबल है! इस पर जाम्बवान् ने कहा–''वीर! तुम्हारा शुभ हो, तुम केवल शुभलक्षणा श्रीजानकी जी को जीती–जागती देखकर ही चले आओ।

अपने जीवन व्रत की पूर्ति की दिशा में आज महावीर के समझ चिर प्रतीक्षित स्वर्ण सुयोग उपस्थित हुआ था। उनके नेत्रों में महर्षि अगस्त्य की व्रत–दीक्षा का दृश्य झूल रहा था। उनके विराट् पौरुष के प्रदर्शन की घड़ी उपस्थित थी। समुद्र लांघने के लिये श्री हनुमान जी ने जो विराट रूप धारण किया था, उसका वर्णन वाल्मीकीय रामायण में विस्तार पूर्वक है। यहां उसका दिग्दर्शन मात्र कराया जाता है–

ववृधे राम वृद्धय्र्थ समुद्र इव पर्वसु।
निश्प्रमाणशरीरः संल्लिलंघयिशुरर्णवम्।।
स चचालाचलश्चाशु मुहत्तं कपिपीडितः।
तरूणां पुशिपताग्राणां सर्व पुश्पमशातयत्।।
तमूरुवेगोन्मथिताः सालाश्चान्ये नगोत्तमः।
अनुजग्मुर्हनूमन्तं सैन्या सु इव महीपतिम्।।
(सुन्दर० १।१०, ११, १२, ४६)

''जिस प्रकार पूर्णिमा के दिन समुद्र बढ़ता है, उसी प्रकार महात्मा श्रीराम के कार्य की सिद्धि के लिये हनुमान बढ़ने लगे। समुद्र लांघने की इच्छा से उन्होंने अपने शरीर को प्रणायाम द्वारा वेहद बढ़ा लिया और अपनी भुजाओं एवं चरणों से उस पर्वत को दबाया तो वह हनुमानजी के द्वारा ताड़ित हुआ पर्वत तुरन्त कांप उठा और मुहूर्त्त भर कांपता रहा। उस पर उगे वृक्षों के समस्त फूल झड़ गये। जब उन्होंने उछाल मारी, तब पर्वत पर उगे हुए साल तथा दूसरे वृक्ष इधर–उधर गिर गये। उनकी जांघों के वेग से टूटे हुए वृक्ष इस प्रकार उनके पीछे चले जैसे राजा के पीछे सेना चलती है।''

इस प्रकार जाम्बवान् आदि की आज्ञा से तथा राम के कार्य के लिये ज्योंही हनुमान ने वीर वेग धारण कर यात्रा आरम्भ की, तो प्रतीत होता था, मानो वन वृक्ष और पर्वत हनुमान की वीरता से काँप रहे हैं। हनुमान की यात्रा को देखने के लिए जो अनेकों वानर समुद्र तट पर आए हुये थे उनके पूछने पर हनुमान ने कहा–

यथा राघव निर्मुक्तः भारःश्वसन विक्रमः। सु० काँ० १।३६

गच्छत्तद्वद्गमिश्यामि लंका रावण पालिताम्। न हि द्रक्ष्यामि यदि तां लंकायां जनकात्मजाम्। सु० १।४०

बद्ध्वा राक्षसराजान मानयिश्मामि रावणम्। सर्वथा कृतकार्योऽहमेश्यामि सहसीतया। सु० ११।४।।

मित्रवर! जिस भांति राम के हाथ से छूटा हुआ वायु समान वेग वाला बाण अपने कार्य को सिद्ध करता है, इसी भांति मैं रावण पालित लंका में जाऊँ और यदि वहाँ लंका में सीता को न पाया तो जहां पता लगेगा, वहीं जाकर उसी उत्साह वं पुरुषार्थ से सीता की सुधि लाऊँगा अथवा राक्षसों के राजा रावण को पकड़ कर यहाँ लाऊँगा। मैं सर्वथा सीता के साथ कृतकार्य होकर यहाँ आऊँगा।

यह कह कर महाबली हनुमान् समुद्र पार होने के लिए समुद्र में प्रविष्ट हो गये। हनुमान् के प्रविष्ट होते ही समुद्र में ऐसा शब्द हुआ जैसे कि मेघ के गर्जन से होता है।

समुद्र पार जाना

हनुमान की यात्रा के समय उसकी नौका पार्थिव होने पर भी वायु की भाँति प्रतीत थी। हनुमान समुद्र के जिस देश में जाते अर्थात् वह जिस २ समुद्री भाग को तैरते वह २ इनकी शीघ्रगति से उन्माद रोगियों की तरह हो जाता। सारांश यह, कि जैसे उन्माद रोगी के मुख से झाग आदि आने लगते हैं, वैसी ही समुद्र की दशा हो जाती। न केवल यही, किन्तु बड़े शब्द वाले समुद्र को एक ओर मेघ वायु और दूसरी और हनुमान् की यात्रा से पैदा हुआ वायु कम्पायमान कर देता था।

बलवान् कपि–कुंजर ऐसे वेग से जाता था, मानो उसके सामने सागर द्रोणी के समान है। अर्थात् हनुमान् के यात्रा–साधन (दिव्य नौका) के सामने समुद्र अपनी गम्भीरता को त्याग देता था।

हनुमान् की इस वीरता को देखकर, जहाँ इस ओर के देव, गन्धर्व, पतंग, ऋषि, मुनि तथा मनुष्य उसे प्रशंसा से देखने लगे, वहां दूसरी तरफ समुद्र में रहने वाले तथा यात्रा करने वाले भी उसे आदर की दृष्टि से देखते थे।

सागर सद्भाव–हनुमान को वेग से आते देखकर सूर्यवंश का मान करने वाला सागर नामक पुरुष सोचने लगा कि–

तस्मिन्प्लवगशार्दूले प्लवमाने हनुमति। इक्ष्वाकु कुलमानार्थी चिन्तयामास सागरः।। सु० १।८५

साहाय्यं वानरेन्द्रस्य यदि नाहँ हनूमतः। करिश्यामि सर्ववाच्यो विवक्ष्यताम्।। सु०१।८६

तथा मया विधातव्यं विश्रमेत यथा कपिः। शेशं च मयि विश्रान्तः सुखोऽसौऽतितरिश्यति।। सु० १।८८

मैंने तो सूर्य वंशियों से कई प्रकार के लाभ पाये हैं। अब सूर्यवंशी युवराज पर विपद् पड़ी है और उसी की सहायता के लिए यह वानरवंशी नरवीर आ रहा है। इस समय यदि मैंने इसकी सहायता न की तो मेरी सब ओर से निन्दा होगी। अतः अब मैं ऐसा यत्न करूँ जिससे कि यह सुख पूर्वक विश्राम कर, अगले मार्ग को सरलतापूर्वक तर ले।

मैनाक पर विश्राम–यह विचार कर सागर ने हनुमान से विश्राम के लिए कहा।

हनुमान ने भी मार्ग लम्बा समझ महात्मा सागर के कथनानुसार 'मैनाक पर्वत' पर विश्राम किया और वहाँ खान–पीना की आवश्यकता को पूर्ण किया।

यहाँ से चलकर हनुमान कई प्रकार के कष्टों को सहते हुए आगे 'सुरसः'' (सुरसा वस्तुतः कोई भौतिक देहधारी स्त्री न थी जिससे महावीर ने युद्ध किया। यह काव्यात्मक अलंकारिक वर्णन है। सु+रसअः का अर्थ है– बहुत रसीला। अर्थात् सांसारिक भोग, भौतिक आकर्षण। ज्यों–ज्यों युवावीर हनुमान् स्वर्णमयी लंका की ओर बढ़ने लगे मानो 'सुरसा' भौतिक आकर्षणों ने उस पर प्रहार किया। ज्यों–ज्यों लंका समीप आ रही थी वे आकर्षण बढ़ते जा रहे थे, सुरसा का मुँह फैल रहा था पर महावीर की संकल्प–शक्ति दूनी बढ़ रही थी और अन्त में सच्चे महावीर ने अपने योग बल से उस पर विजय प्राप्त की। यही सुरसा–समागम का रहस्य है।) से कुछ काल तक युद्ध कर पूर्ण स्वस्थता से समुद्र के पार हो गये।

(अगले अंक में क्रमश)

सबके लिये सत्यार्थ प्रकाश

पं० वेद प्रकाश शास्त्री

अबालवृद्ध सभी के लिए सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि–

1. यदि किशोर पढ़ेंगे तो उनके जीवन का मार्ग प्रशस्त होगा। उन्हें अपना शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास करने की प्रेरणा मिलेगी।
2. इसे तरुण पढ़ें ताकि इसमें निर्दिष्ट जीवन दिशा के द्वारा अपना भविष्य बना सकें।
3. प्रौढ़जन पढ़ें ताकि जीवन यापन करते समय व्यवहार में हो जाने वाली त्रुटियों तथा दोषों को जानकर अपना सुधार कर सकें।
4. वृद्धजन पढ़ें ताकि वर्तमान जीवन में अपनी बुद्धि, योग्यता और सामर्थ्य के अनुसार अपने किए कर्मों का स्मरण कर आगामी जीवन को उत्तम बनाने का प्रयत्न करें।
5. ब्राह्मण एवं अध्यापक वर्ग पढ़ें ताकि उन्हें सच्ची शिक्षा एवं उपयोगी विद्या के उद्देश्य का ज्ञान हो सके और वे सभी स्त्री–पुरुषों तथा छात्र–छात्राओं को बिना वर्ण, जाति, कुल, ऊँच–नीच आदि भेदभाव के बिना समान रूप से धार्मिक विद्वान् बना सकें।
6. क्षत्रिय, सैनिक, राज्याधिकारी पढ़ें जिससे वे अपने कर्त्तव्यों का बोध प्राप्त कर राष्ट्र की अभिवृद्धि करें। साधुपरित्राण तथा दुष्टों का विनाश कर विश्व में मतविहीन धर्मराज्य की स्थापना कर सकें।
7. विभिन्न मतावलम्बी पढ़ें जिससे वे अपने–अपने मत के दोषों–त्रुटियों का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर सकें।

इस प्रकार सभी पढ़ें ताकि वे समानता, स्वतंत्रता तथा भ्रातृभाव की शिक्षा ग्रहण करके परस्पर मिलकर राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता को बनाये रख सकें।

वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय

–स्वामी यतीश्वरानन्द जी महाराज

वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय भारतीय क्रान्तिकारी आंदोलन में एक ऐसे क्रांन्तिकारी हैं जिन्होंने जर्मनी, जापान व रूस तक भारत की स्वतंत्रता के लिये संघर्ष किया। प्रथम विश्वयुद्ध, रूसी क्रांन्ति तथा हिटलर के उदय के बीच किस प्रकार इन्होंने भारतीय स्वतंत्रता के स्वप्न को साकार करने के लिये काम किया यह अपने आप में एक उपलब्धि है।

वीरेन्द्रनाथ के पिता डॉ0 अघोरनाथ चट्टोपाध्याय विज्ञान के प्रोफेसर तथा हैदराबाद के निजाम कॉलेज के प्राचार्य थे। इनकी माता का नाम बरद सुंदरी था। चट्टोपाध्याय परिवार बंगाली था परन्तु अघोरनाथ इडिनबर्ग विश्वविद्यालय से विज्ञान में पी.एच.डी. करने के बाद हैदराबाद में बस गये थे। हैदराबाद में ही वीरेन्द्र का जन्म हुआ था। यह उल्लेखनीय है कि सरोजिनी नायडू वीरेन्द्र की बहन थी तथा एक वर्ष बडी थी। वीरेन की माता कवयित्री थी, बडी बहन सरोजिनी कवियित्री थी, भाई हरीन्द्रनाथ कवि थे। इनकी छोटी बहन मृणालिनी क्रांन्तिकारियों के सम्पर्क में थी तथा एक भाई मरीन भी क्रांन्तिकारियों के साथ रहे थे। इन्होंने मद्रास से मैट्रिक पास किया तथा कलकत्ता विश्वविद्यालय से कला में स्नातक किया। प्रसिद्ध है कि वीरेन को तेलगू, तमिल, बंगाली, उर्दू, फारसी, हिन्दी, अंग्रेजी, फ्रेंच, इटेलियन, जर्मन, डच, रशियन, स्कैन्डिनेवियन तथा जापानी भाषाएं आती थी। बहन मृणालिनी ने वीरेन को क्रान्तिकारी वकील विजयचन्द्र चटर्जी से मिलवाया तथा श्री अरविन्द के परिवार से भी इनका परिचय था।

1902 में वीरेन को आई.सी.एस. की परीक्षा की तैयारी करने के लिये इंग्लैंड भेजा गया जहाँ ये ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में पढने लगे। बाद में ये प्रसिद्ध मिडिल टैम्पल कॉलेज में कानून का अध्ययन करने लगे तथा तभी इनका सम्पर्क श्यामजी कृष्ण वर्मा के 'इडिया हाउस' से हो गया। 1906 में सावरकर से भेंट के बाद वीरेन सदा के लिये राष्ट्रवाद के पथ पर चल पडे तथा 1907 में इन्हें श्यामजी के क्रांन्तिकारी मासिक पत्र 'द इण्डियन सोशियोलोजिस्ट' के सम्पादक मण्डल में शामिल कर लिया गया। अगस्त 1907 में वीरेन ने भीखाजी कामा के साथ स्टुटगार्ट में आयोजित समाजवादी कांग्रेस में भाग लिया तथा यहाँ उन्हें विश्व के प्रसिद्ध समाजवादी नेताओं से भेंट करने का अवसर मिला। 1908 में इण्डिया हाउस में वीरेन की लाला हरदयाल, लाला लाजपतराय तथा विपिनचन्द्रपाल से भेंट हुई। दिसम्बर 1908 में ये लंदन में राष्ट्रवादी पत्र स्वराज के सम्पादक बन गये। 01 जुलाई 1909 को मदनलाल धींगड़ा द्वारा कर्जन वाइली की हत्या के बाद ब्रिटेन में भारतीय क्रान्तिकारियों पर पुलिस का अत्याधिक दबाव आ गया। इस हत्या के पांच दिन बाद वीरेन ने

लंदन के टाईम्स समाचार पत्र में पत्र लिखकर सावरकर का समर्थन किया। इस पर इन्हें मिडिल टैम्पल कॉलेज से निकाल दिया गया। नवम्बर 1909 में इन्होंने राष्ट्रवादी पत्र 'तलवार' का सम्पादन करना शुरू किया परन्तु जब इनके विरूद्ध गिरफ्तारी का वारन्ट निकल गया तो जून 1910 में ये पेरिस आ गये। पेरिस में ये भीखाजी कामा के आवास पर रहते थे तथा फ्रांस में मजदूर आंदोलन में भाग लेते थे।

1912 में वीरेन ने एक अंग्रेज युवती रेनोल्ड्स से विवाह कर लिया। प्रथम विश्वयुद्ध प्रारम्भ होने तक ब्रिटेन तथा फ्रांस में रह रहे भारतीय क्रान्तिकारियों पर गिरफ्तारी का खतरा था अतः इससे पहले ही रेनोल्ड्स इंग्लैंड लौट गयी जबकि वीरेन अप्रैल 1914 में जर्मनी आ गये। यहाँ इन्होंने तुलनात्मक भाषा विज्ञान के विद्यार्थी के तौर पर एक विश्वविद्यालय में दाखिला ले लिया। बर्लिन में वीरेन की भेंट डॉ. अविनाश भट्टाचार्य से हुई जिनकी जर्मनी के सम्राट के निजी लोगों तक पहुँच थी। इस प्रकार सितम्बर 1914 में वीरेन ने जर्मन सहयोगियों के साथ भारतीय क्रान्तिकारियों का एक संगठन बना लिया। फिर इनकी तारकनाथ दास, लाला हरदयाल, बरकतुल्ला तथा विष्णु पिंगले से चर्चा हुई जिसमें यह तय किया गया कि जर्मन सहयोग से भारत में सशस्त्र क्रांन्ति के लिये हथियार भेजे जाएं तथा भारतीय सैनिकों को ब्रिटिश सेना व सरकार के विरूद्ध विद्रोह के लिये प्रेरित किया जाये। 22 सितम्बर 1914 को इस 'बर्लिन कमेटी' के सदस्य अमेरिका में जर्मन राजदूत को मिलने वाशिंगटन गये तथा 20 नवम्बर को वीरेन ने सत्येन सेन, विष्णु पिंगले तथा करतार सिंह सराभा को बाघा जतिन के पास कलकत्ता भेजा। बाघा जतिन ने पिंगले तथा सराभा को रासबिहारी बोस के पास भेजा ताकि विद्रोह की तैयारी मे तेजी लाई जा सके। फिर वीरेन जर्मन सम्राट विलहेल्म कैसर का निजी भेंट का संदेश लेकर स्विटजरलैंड में राजा महेन्द्र प्रताप के पास गये। स्विस सीमा पर ब्रिटिश जासूस डोनाल्ड गुलिक वीरेन की हत्या करने वाला था पर सौभाग्य से वीरेन को स्विस सीमा अधिकारियों ने पूछताछ के लिये पकड़ लिया तथा बाद में छोड़ दिया। भारत में जर्मन सहायता से सैनिक विद्रोह की योजना राज खुलने के कारण असफल हो गई। बाद में विश्वयुद्ध में जर्मनी की हार निश्चित जानकर वीरेन ने 1917 में बर्लिन कमेटी का मुख्यालय स्टॉकहोम (स्वीडन) में स्थानांतरित कर लिया। यहाँ उनका रूसी साम्यवादी नेताओं से सम्पर्क हुआ तथा दिसम्बर 1918 में वीरेन ने बर्लिन कमेटी को भंग कर दिया। फिर वीरेन ने बर्लिन में क्रान्तिकारियों की एक गुप्त सभा का आयोजन किया परन्तु विश्वयुद्ध के बाद जर्मनी की राजनीतिक स्थिति इतनी अस्थिर थी कि जर्मनी में रहकर भारत के लिये संघर्ष करना सम्भव नहीं रह गया था।

तब तक बाघा जतिन के सहयोगी नरेन भट्टाचार्य अपने मानवेन्द्रनाथ राय के दूसरे नाम से सोवियत संघ पहुँचकर रुसी नेताओं से सम्पर्क स्थापित कर चुके थे। रूसी नेता बोरोदिन की सहमति से मानवेन्द्रनाथ राय ने वीरेन को मास्को बुला लिया और उन्हें भारत में क्रान्तिकारी गतिविधियों के लिये रूसी आर्थिक और

राजनीतिक सहायता का भरोसा दिलाया। अमेरिका पत्रकार व लेखिका एग्नेस स्मेडले के साथ वीरेन्द्रनाथ मास्को गये। यहाँ 1921 में लेनिन ने इनसे भेंट की। वीरेन ने मास्को में तीसरी 'कम्यूनिस्ट इंटरनेशनल कांग्रेस' की भारतीय समिति में भाग लिया। फिर उसी वर्ष इन्होंने बर्लिन में एक समाचार संस्था की स्थापना की। इसमें इनका कई जापानी विद्वानों ने भी सहयोग किया जो इनके अच्छे मित्र बन गया। मास्को में वीरेन इग्नेस स्मेडले के साथ सात वर्ष तक रहे यद्यपि इन्होंने विवाह नहीं किया। 1927 में ब्रसेल्स में आयोजित 'साम्राज्यवाद विरोधी लीग' की सभा में वीरेन महासचिव थे। इस नाते उन्होंने भारत से जवाहरलाल को इस कांफ्रेन्स में भाग लेने के लिये बुलाया तथा उनके साथ जवाहरलाल ने सभा में भाग लिया। जवाहरलाल इनके व्यक्तित्व, बुद्धिमत्ता, सहृदयता से बडे प्रभावित हुए और दोनों में मित्रता हो गई। बाद में जब 1929 में जवाहरलाल कांग्रेस के अध्यक्ष बने तो वीरेन ने उन्हें कांग्रेस को क्रान्ति के पथ पर चलाने की सलाह दी चाहे इसके लिये कांग्रेस को गाँधीवादी पक्ष से अलग ही क्यों ना होना पड़े।

वीरेन तब तक प्रमुख रूसी पत्रिकाओं में लेख लिखते थे जिनमें एशियाई मुक्ति, हिटलर विरोध, भारतीय स्वाधीनता प्रमुख विषय होते थे। इनके उस समय मित्रों में बाद के चीनी प्रधानमंत्री झाऊ–एन–लाई भी शामिल थे।

एग्नेस से वीरेन की अंतिम भेंट 1933 में हुई। बाद में एग्नेस ने लिखा कि वीरेन भारत आना चाहते थे पर ब्रिटिश सरकार उन पर भरोसा करने को तैयार नहीं थी। 1934 में वीरेन का लेनिन की विधवा पत्नी से पत्राचार हुआ। 18 मार्च 1934 को वीरेन ने लेनिन की याद में एक व्याख्यान दिया। फिर इन्होंने रूसी महिला लीडिया करूनोवस्काया से विवाह कर लिया तथा लेनिनग्राड की विज्ञान अकादमी के सांस्कृतिक विभाग में काम करने लगे। 15 मार्च 1937 को स्टालिन के आदेश पर इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। इन पर जापानियों के लिये जासूसी करने का आरोप लगाया गया तथा 30 अगस्त 1937 को स्टालिन ने जिन 184 व्यक्तियों को मृत्युदंड देने वाले दस्तावेज पर हस्ताक्षर किये उनमें वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय का भी नाम था। वास्तव में इन्हें उस समय कम्यूनिस्ट पार्टी में दूसरे सबसे बडे नेता तथा इस प्रकार स्टालिन के संभावित प्रतिस्पर्धी का करीबी समझा जाता था और इसलिये इनका मृत्युदण्ड दिया गया। 2 सितम्बर 1937 को इन्हें मृत्युदण्ड दिया गया परन्तु इनकी मृत्यु का समाचार स्टालिन के रूस के अन्य समाचारों की तरह ही छुपाकर रखा गया। इनकी मृत्यु के बाद भी इनके सम्बन्धी इनके समाचार के लिये वर्षों चिन्तित रहे। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने वीरेन की बुद्धिमत्ता व नेतृत्व क्षमता की प्रशंसा की। वीरेन्द्रनाथ चट्टोपाध्याय उन क्रान्तिकारियों में हैं जिनके बलिदान से स्वतंत्र भारत की सरकारें न्याय नहीं कर पाई हैं। इनके सम्बन्ध में स्वतंत्र भारत की सरकार ने कभी सोवियत संघ की सरकार से पूछताछ नहीं की, शायद इस डर से कि कहीं शक्तिशाली सोवियत संघ से भारत के सम्बन्ध न बिगड़ जायें। एक स्वतंत्र राष्ट्र के लिये इससे बड़ी त्रासदी क्या हो सकती है कि वह अपने क्रान्तिकारियों को इसलिये भुला दे कि उसकी विदेश नीति किसी अन्य देश की बंधक है!

हिन्दी दिवस 14 सितम्बर पर

आद्य धर्मग्रन्थ वेदों का हिन्दी में प्रचार करने वाली अपूर्व संस्था आर्यसमाज

—मनमोहन कुमार आर्य

सनातन वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित संस्था आर्यसमाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने 10 अप्रैल, सन् 1875 को मुम्बई नगरी में की थी। स्वामी जी की मातृभाषा गुजराती थी। आर्यसमाज एक धार्मिक एवं सामाजिक संगठन व आन्दोलन है जिसका उद्देश्य धर्म, समाज व राजनीति के क्षेत्र से असत्य व अविद्या को दूर करना व उसके स्थान पर सत्य को स्थापित करना है। क्या धर्म, समाज व राजनीति आदि में असत्य का व्यवहार होता है? इसका उत्तर हां में हैं। यदि धर्म के क्षेत्र में असत्य की बात करें तो हमें सृष्टि की आरम्भ में ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान की चर्चा करनी आवश्यक प्रतीत होती है। सृष्टि की उत्पत्ति के पश्चात जब प्रथमवार मनुष्यों के रूप में युवा स्त्री व पुरूषों की अमैथुनी उत्पत्ति ईश्वर ने की, तो उन्हें अपने दैनन्दिन व्यवहारों वा बोलचाल के लिये एक भाषा सहित कर्तव्य व अकर्तव्य के बोध की आवश्यकता थी। वह आवश्यक ज्ञान ''वेद'' के रूप में ईश्वर ने मनुष्यों की प्रथम पीढ़ी को वैदिक संस्कृत भाषा में दिया जिससे वह अपने समस्त कर्तव्य—व्यवहार आदि जान सके। इस प्रकार सृष्टि के आरम्भ में मनुष्योत्पत्ति के साथ ही वैदिक धर्म की स्थापना स्वयं परमात्मा ने चार ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को वेद ज्ञान देकर की थी।

यह भी निर्विवाद है कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल तक के लगभग 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख वर्षों तक पूरे भूमण्डल पर वेद व वैदिक धर्म ही प्रचलित रहे जो ज्ञान व विज्ञान की कसौटी पर पूर्ण सत्य और तर्कसंगत थे। महाभारत युद्ध में हुई जान व माल की भारी क्षति के कारण देश में अध्ययन व अध्यापन का पूरा ढांचा ध्वस्त हो गया था। यद्यपि धर्म तो वैदिक धर्म ही रहा परन्तु वेद व वैदिक साहित्य के अध्ययन व अध्यापन की समुचित व्यवस्था न होने के कारण इसमें अज्ञान, अन्धविश्वास, कुरीतियां, सामाजिक असमानतायें—विषमतायें तथा अनेक पाखण्डों सहित संस्कृति व सभ्यता में भी विकार उत्पन्न हुए व होते रहे। अज्ञान के कारण स्वार्थ ने भी सिर उठाया और गुण, कर्म व स्वभाव पर आधारित वैदिक वर्ण व्यवस्था का स्थान जन्मना जाति व्यवस्था ने ले लिया। वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण शिखर तथा शूद्र निम्न स्थान पर था। ब्राह्मणों की ओर से यहां तक कहा गया कि उनकी कही प्रत्येक बात राजा व अन्य वर्णों को माननीय होती है और सभी ब्राह्मण अपने अपराधों के लिये अदण्ड्य होते हैं। इसका अर्थ यह था की ज्ञानी या अज्ञानी ब्राह्मण कोई अनुचित बात भी कहे व करे, तो उसे इतर सभी मनुष्यों को बिना सोचे विचारे स्वीकार करना होगा। यह ऐसा ही था जैसी कुछ मतों में वर्तमान में भी व्यवस्था है, जिसके अनुसार धर्म में अकल का दखल नहीं है। इन्हीं कारणों से वैदिक धर्म अनेक अन्धविश्वासों से ग्रस्त हुआ।

संसार में वैदिक धर्म के बाद भारत से बाहर दूसरा मत जो अस्तित्व में आया, उसे पारसी मत के नाम से जाना जाता है। इसके बाद भारत में बौद्धमत व जैन मतों का आविर्भाव हुआ और कालान्तर में भारत से सुदूर देशों में ईसाई व इस्लाम मतों का प्रादुर्भाव हुआ। इन सभी मतों की भाषा संस्कृत से भिन्न, पारसी, पाली, हिब्रू, अरबी आदि थीं। इसके बाद भारत में सिख मत की स्थापना भी हुई जिनका धर्म ग्रन्थ गुरू–ग्रन्थ–साहब गुरूमुखी भाषा में है। इस प्रकार से सन् 1875 तक अस्तित्व में आये किसी भी मत व सम्प्रदाय के धर्मग्रन्थ की भाषा हिन्दी नहीं थी। महर्षि दयानन्द विश्व इतिहास में पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वैदिक धर्म के विकारों वा अन्धविश्वासों के सुधार के लिए युक्तियों व तर्क से वैदिक धर्म के यथार्थ स्वरूप को अपने सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ में प्रस्तुत किया। यह सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ आर्यसमाज के अनुयायियों के धर्मग्रन्थ वेद के व्याख्या ग्रन्थ के समान है। सत्यार्थप्रकाश विश्व का पहला धर्मग्रन्थ है जो हिन्दी में है तथा जिसे महर्षि दयानन्द ने आर्यभाषा अर्थात् आर्यों की भाषा नाम दिया।

सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ की प्रथम रचना सन् 1874 के उत्तरार्ध में काशी में महर्षि दयानन्द जी ने की थी। इसका सन् 1883 में नया संशोधित संस्करण तैयार किया गया जिसका प्रकाशन सन् 1884 में हुआ। यही संस्करण आज आर्यों के धर्मग्रन्थ के रूप में पूरे विश्व में प्रचलित व प्रसिद्ध है। यह क्रान्तिकारी ग्रन्थ है। इसका प्रभाव यह हुआ है कि बड़ी संख्या में पौराणिक मान्यता प्रधान सनातन धर्म के बन्धुओं ने इसे पढ़कर तथा इससे सहमत होकर इसे स्वीकार किया है। ने केवल पौराणिक बन्धुओं ने अपितु प्रायः सभी मतों के बन्धुओं ने समय–समय पर वैदिक धर्म को स्वीकार किया है। इसका कारण वैदिक धर्म की अन्य मतों से भिन्न व श्रेष्ठ, युक्तिसंगत एवं हितकारी मान्यतायें हैं। सत्यार्थप्रकाश के हिन्दी में होने के कारण महर्षि दयानन्द व आर्यसमाज के देश–विदेश के सभी अनुयायियों ने हिन्दी सीखी। अन्य मतों के लोगों ने वैदिक मत व सत्यार्थप्रकाश में गुण व दोषों को जानने की दृष्टि से भी हिन्दी सीखी जिससे एक लाभ यह हुआ कि हिन्दी का प्रचार व प्रसार हुआ। हिन्दी के प्रचार व प्रसार को दृष्टि में रखकर ही महर्षि दयानन्द ने सत्यार्थप्रकाश के अंग्रेजी व उर्दू आदि भाषाओं में अनुवाद की अनुमति नहीं दी थी। इस कारण देश–विदेश में लोगों ने हिन्दी सीखी।

महर्षि दयानन्द के जीवन काल में जब ब्रिटिश सरकार ने भारत में राजकार्यों में भाषा के प्रयोग की संस्तुति के लिये हण्टर कमीशन बनाया तो महर्षि दयानन्द ने हिन्दी को राजकार्यों में प्रथम भाषा के रूप में मान्यता दिलाने के लिए एक आन्दोलन किया। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप देश भर में आर्यसमाज के अधिकारियों व अनुयायियों ने बड़ी संख्या में देशवासियों के हस्ताक्षरों से युक्त ज्ञापन आर्यभाषा हिन्दी को देश के राजकार्य की प्रथम भाषा बनाने हेतु हंटर कमीशन को भेजे थे। महर्षि दयानन्द की प्रेरणा से आर्यसमाज में आर्यदर्पण, भारत–सुदशा–प्रवर्तक आदि अनेक हिन्दी पत्रों का प्रकाशन आरम्भ किया गया था जिससे हिन्दी का प्रचार देश भर में हुआ। यह भी जानने योग्य है कि महर्षि दयानन्द से प्रभावित उदयपुर, शाहपुरा व जोधपुर आदि रिसायतों के राजाओं ने अपने यहां हिन्दी को राज–कार्यों की भाषा के रूप में मान्यता प्रदान की थी। महर्षि दयानन्द ने अपना समस्त पत्र व्यवहार हिन्दी में ही किया। हिन्दी के सर्वाधिक प्रतिष्ठित पुरुष भारतेन्दु हरिश्चन्द्र स्वामी दयानन्द जी के काशी के सत्संगों में सम्मिलित

हुए थे और उन्होंने स्वामीजी की प्रशंसा की है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी ने **'अन्धेर नगरी'** नामक नाटक सन् 1881 में लिखा था। यह नाटक सत्यार्थप्रकाश की प्रेरणा से लिखा गया प्रतीत होता है। मनुष्य जो पढ़ता व सुनता है उनका वैसा ही संस्कार बनता है। इस प्रकार भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी पर भी ऋषि दयानन्द के संस्कार पड़े, ऐसा प्रतीत होता है।

महर्षि दयानन्द के परलोक गमन के बाद आर्यसमाज ने गुरूकुल तथा डी०ए०वी० स्कूल व कालेज खोले जिनमें हिन्दी को मुख्य भाषा के रूप में स्थान मिला। आर्यसमाज का यह कार्य भी हिन्दी के प्रचार व प्रसार में सहायक रहा। इसके साथ आर्यसमाज में हिन्दी की अनिवार्यता के कारण हिन्दी के अनेक विद्वान, वेदभाष्यकार, कवि, पत्रकार, प्रोफेसर, अध्यापक, स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेता व आन्दोलनकारी आदि भी तैयार हुए जिन्होंने हिन्दी में साहित्य सृजन कर हिन्दी के स्वरूप को निखारने व उसे घर–घर पहुंचाने में प्रभावशाली योगदान किया है। आर्यसमाजों व इसके अनुयायियों के लिए अपना समस्त कार्य हिन्दी में करना अनिवार्य होता था। रविवार के सत्संगों में विद्वानों के सभी उपदेश हिन्दी में ही होते थे। यह बात भी महत्वपूर्ण है कि महर्षि दयानन्द ने अपनी आत्मकथा हिन्दी में लिखी है जिसे हिन्दी की प्रथम आत्मकथा होने का गौरव प्राप्त है। ऋषि दयानन्द की इस आत्मकथा का महत्व इस कारण भी है कि विश्व के इतिहास में ऋषि दयानन्द से पूर्व कभी किसी ऋषि या किसी मत के संस्थापक आचार्य ने अपनी आत्मकथा नहीं लिखी। इस प्रकार से आर्यसमाज व इसके हिन्दी प्रचार के लिये समर्पित विद्वानों की छत्रछाया में देश में हिन्दी ने अपना नया प्रभावशाली व उन्नत स्वरूप प्राप्त किया। आर्यसमाज के विद्वानों ने प्रचुर मात्रा में हिन्दी में धार्मिक व सामाजिक साहित्य भी दिया है। इस दृष्टि से देश की अन्य कोई धार्मिक, सामाजिक व राजनैतिक संस्था हिन्दी के प्रचार–प्रसार व संवर्धन में आर्यसमाज से समानता नहीं रखती। आर्यसमाज का हिन्दी के प्रचार व प्रसार में सर्वोपरि योगदान रहा है। आज देश में हिन्दी का जितना प्रचार है, उसके केन्द्र में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की प्रेरणा ही है। यदि आर्यसमाज न होता तो हिन्दी देश की राजभाषा न होती। दुर्भाग्य यह है कि आर्यसमाज के हिन्दी के प्रचार, प्रसार व इसे लोकप्रिय बनाने के लिए किये गये योगदान को देश ने मान्यता प्रदान नहीं की है। हिन्दी को जिस आर्यसमाज ने गौरवपूर्ण स्थान दिलाया है, उसका ज्ञान भी हमारे देशवासियों को न होना कष्ट देता है।

आगामी हिन्दी दिवस 14 सितम्बर पर गुजरात में जन्मे महर्षि दयानन्द सरस्वती जिनकी मातृभाषा गुजराती थी, उनके और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज के हिन्दी भाषा के लिए किए गए योगदान को स्मरण कर हम दोनों का वन्दन करते हैं। वर्तमान समय में हिन्दी के स्वरूप को बिगाड़ने के भी प्रयत्न हो रहे हैं। उसमें अंग्रेजी व उर्दू आदि भाषाओं के शब्दों को अनावश्यक रूप से मिलाया जा रहा है। कुछ व अनेक हिन्दी समाचार पत्रों में भी यह दोष दृष्टिगोचर होता है। कोई भी भाषा अपने शुद्ध रूप में ही अच्छी लगती है। अंग्रेजी व उर्दू में हिन्दी शब्दों को मिलाने की वकालत नहीं की जाती परन्तु हिन्दी के साथ ऐसा विरोधी व्यवहार किया जाता है। इससे हिन्दी प्रेमियों को सावधान रहना है। हमें संस्कृत–हिन्दी के सरल व सुबोध शब्दों का ही अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिये जिससे यह खिचड़ी भाषा न बने।

क्या बनना चाहते हो? पुरुष या स्त्री!

—महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

एक राजा बेचैन था। उसे किसी करवट चैन न था, क्योंकि उसका घर सन्तान के दीपक से प्रकाशमान् नहीं था। मोमबत्तियाँ जलती थी। लैम्प प्रज्वलित होते थे। हीरों की चमक प्रकाश उत्पन्न करती थी, परन्तु राजा को महल अन्धकारमय प्रतीत होता था। उसके हृदय में अँधेरा था। उसकी आँखों के सामने कोई प्रकाशवाली वस्तु न थी, जो उसके हृदय को प्रकाशित कर सके।

अन्ततः उसके घर में एक पुत्री उत्पन्न हुई। खुशी के बाजे बजे और सारा महल हँसी—खुशी के तरानों से भर गया। लड़की बढ़ी और बढ़ते—बढ़ते लड़की बन गई, परन्तु राजा चकित है, रानियाँ दुःखी हैं और जो भी इस बात को सुनता है वह लज्जित होता है कि लड़की कपड़े नहीं पहनती। इधर कुर्ता पहनाया, उधर उसने फाड़कर फेंक दिया। इधर धोती बाँधी और उसने अलग कर दी। लाख—लाख प्रयत्नों से वस्त्र पहनाये जाते हैं, परन्तु लड़की कुछ ऐसी हट पर अड़ी है कि वह वस्त्रों को अलग फेंक देती है और तनिक भी वस्त्र पहनना पसन्द नहीं करती। समय ऐसे ही व्यतीत होता गया। एक वर्ष, तीन वर्ष, चार वर्ष—ऐसे ही पर्याप्त समय व्यतीत हो गया। लड़की शैशव—बचपन से निकलकर जवान होने लगी, परन्तु उसे वस्त्रों से चिढ़ है। वह निःसंकोच नंगी ही फिरती है और तनिक भी लज्जा अनुभव नहीं करती। राजा ने कई यत्न किये, अनेक प्रयत्न किये, परन्तु कोई भी उपाय सफल नहीं हुआ।

अन्ततः एक दिन राजा के महल में एक साधु आ गये। लड़की ने उस साधु को देखा और दौड़कर अन्दर चली गई और वस्त्र पहन लिये। राजा ने जब उसे वस्त्र पहने देखा तो प्रसन्न होकर लड़की से पूछा—''यह आज कैसा अच्छा दिन है जो तुम्हें कुछ—कुछ समझ आई है, परन्तु यह तो बताओ कि पहले क्यों वस्त्र पहनने से इन्कार करती थी और वस्त्रों को फाड़कर फेंक देती थी। यद्यपि लाख—लाख प्रयत्न किये तो भी तुमने वस्त्र नहीं पहने।''

इस पर लड़की ने बड़ी शालीनता से उत्तर दिया—

सुनो पिताजी! स्त्री को पुरुष से लज्जा अनुभवन होती है।

स्त्री से स्त्री को कोई लज्जा नहीं होती। जब से मैंने होश सँभाला है तब से आपके नगर में मुझे कोई मर्द—पुरुष दिखाई नहीं दिया। आज एक साधु हमारे महल में आया। मैंने उसे देखा वह मर्द है, बस, मैंने तुरन्त वस्त्र पहन लिये। राजन्! मर्द—पुरुष किसका नाम है? पुरुष उसे कहते हैं जिसने अपने शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में कर लिया है और जिसने अपने शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में नहीं रखा वह मर्द नहीं है।

बस, सच्चे ईश्वरभक्त के अतिरिक्त और कोई मर्द ऐसा नहीं हो सकता जो इनको वश में कर सके। मुझे आपके नगर में कोई ऐसा ईश्वरभक्त दिखाई नहीं दिया, इसलिए मैं किसी को मर्द नहीं समझती थी। आज मैंने एक

ईश्वरभक्त देखा है, इसलिए मुझे शर्म आई और मैंने वस्त्र पहन लिये।

यही तात्पर्य गार्गी और याज्ञवल्क्य के मनोहर वार्तालाप से प्रकट होता है, जिसमें गार्गी याज्ञवल्क्य को कहती है कि ''हे याज्ञवल्क्य! मैं इस जगत् को अपुरुष, अर्थात् पुरुषहीन देखती हूँ। मुझे इस संसार में कोई पुरुष अर्थात् मर्द दिखाई नहीं देता।'' आगे चलकर गार्गी कहती है कि ''जो पुरुष अपने हृदय में स्थित आत्मा को नहीं जानता, वही स्त्री है।''

वस्तुतः वह पुरुष कहलाने का अधिकारी नहीं जो अपने आपको पहचानकर ईश्वरभक्त नहीं बनता। जो पुरुष पुरुष होकर अपने–आपको सांसारिक भोग–विलास का दास बना देता है, वह एक प्रकार से भोग–विलास को अपना पति स्वीकार कर लेता है। वह स्वयं पत्नी बन जाता है। एक पुरुष धन के लिए व्याकुल रहकर उन्हें अपना पति बना लेता है और समझता है कि उसके बिना मेरा निर्वाह नहीं है।

तीसरा संसार की किसी अन्य वस्तु का इतना दास हो जाता है कि वह उस वस्तु को ही अपना पति समझने लगता है। इस प्रकार संसार में प्रत्येक मर्द किसी–न–किसी रूप में स्त्री बन जाता है और अपने वास्तविक पुरुषपन को नष्ट कर देता है।

इस बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए आप एक धनिक का उदाहरण लें। एक धनिक धन के इतना दास है कि वह उससे एक मिनट के लिए भी पृथक् होना अपनी मृत्यु समझता है। किसी प्रकार से वह धन उससे छीन लिया जाता है। अब वह धनिक उस धन के वियोग में पतिव्रता स्त्री की भाँति कुढ़ता और तड़पता हुआ कभी–कभी तो आत्महत्या कर लेता है। क्या इन अर्थों में वह धनिक धन की स्त्री नहीं?

अब पाठक बताएँ कि वे क्या बनना चाहते हैं? उन्हें पुरुष बनना स्वीकार है या स्त्री? इस बात का निर्णय वे स्वयं ही कर सकते हैं, क्योंकि यह निर्णय करना उनके अपने हाथ में है। शरीर और इन्द्रियों को अपने वश में करना एक पुरुष कहलाने वाले मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है और शरीर तथा इन्द्रियाँ ईश्वरभक्ति से ही वश में हो सकती हैं। सच्चा ईश्वरभक्त उनका स्वामी होता है–उनका पति होता है, परन्तु जो ईश्वरभक्त नहीं है, वह शरीर और इन्द्रियों की पत्नी बन जाता है।

जो लोग इस तथ्य को समझेंगे, वे निःसन्देह नास्तिक बनकर अपने जीवन को नष्ट नहीं करेंगे।

वैदिक योग प्रशिक्षण शिविर प्रथम स्तर

(17 नवम्बर सायंकाल से प्रातः 24 नवम्बर 2019)

वैदिक संध्या प्रशिक्षण शिविर

(26 नवम्बर सायंकाल से 01 दिसंबर प्रातःकाल तक)

दैनिक यज्ञ एवं प्रातःकालीन–सांयकालीन मन्त्र प्रशिक्षण शिविर

(3 दिसंबर सांयकाल से 8 दिसंबर 2019 प्रातःकाल तक)

प्रार्थना

—वेदरत्न, प्रो. रामप्रसाद वेदालंकार

ओ३म् पवमानः पुनातु मा क्रत्वे दक्षाय जीवसे। अथो अरिष्टतातये।। अथर्व—६—१६—२

अन्वयः पवमानः क्रत्वे दक्षाय जीवसे अथो अरिष्टतातये मा पुनातु।

अन्वयार्थः—(पवमानः) पवित्र करने वाला पावन परमेश्वर (क्रत्वे) क्रतु अर्थात् प्रज्ञा और सत्कर्म के लिए (दक्षाय) बल, बुद्धि और फुर्ती के लिए (ओवसे) उत्तम जीवन और दीर्घायुष्य के लिए (अथो अरिष्टतातये) ओर अहिंसक सर्वहितकारी बनने के लिए (मा पुनातु) मुझे पवित्र करें।

हे सदा सब को पवित्र करने वाले पवमान प्रभो! मेरी हार्दिक प्रार्थना है कि तू मुझे पवित्र कर, तू मुझे शुद्ध कर, तू मुझे स्वच्छ कर तू मुझे निर्मल और निःस्वार्थ कर।

हे पवित्रता के अनुपम स्त्रोत प्यारे प्रभुवर ! मैं तुझ से इसलिए यह विनय कर रहा हूँ, तुझ से इसलिए यह प्रार्थना कर रहा हूँ, तुझ से इसलिए यह याचना कर रहा हूँ कि जिससे मैं पवित्र होकर सच्चा क्रतुमान बन सकूँ, मैं वास्तविक दक्ष—बल वाला बन सकूँ, मैं दीर्घ जीवन और सुजीवन वाला बन सकूँ, तथा मैं सच्चा अहिंसक बनकर सबके प्रति स्नेह और हित का सुन्दर व्यवहार कर सकूँ।

हे पावन परमेश्वर ! मुझे विश्वास है कि यदि तुझ पवित्रतम देवाधिदेव की कृपा हो जाये, अनुकम्पा हो जाये, दया हो जाये, तो फिर निश्चय ही मेरे क्रतु अर्थात् मेरी प्रज्ञा और कर्म, मेरी बुद्धि और मेरा कार्य, मेरा विचार और मेरा व्यवहार दोनों पवित्र हो जायेंगे। तब मेरी प्रजा सुप्रजा में, मेरी बुद्धि सुबुद्धि में, मेरा ज्ञान सुज्ञान में, मेरा विचार सुविचार में बदल जायेगा। तब मेरा कर्म सुकर्म में, पुण्य कर्म में, यज्ञमय कर्म में, निष्काम कर्म में बदल जायेगा।

हे पवित्रता के दिव्य स्त्रोत प्रभुदेव्! यदि तेरी कृपा में मैं पवित्र बन जाऊँगा तो तब मैं हर दृष्टि से दक्ष बल वाला बन जाऊँगा। तब मेरा आत्मबल बढ़ जायेगा, मनोबल बढ़ जायेगा, शारीरिक बल बढ़ जायेगा। उस समय मैं यह दृष्टि से सशक्त होकर गतिमान हो जाऊँगा, गतिशील हो जाऊँगा। मुझ में तब जीवनोत्थान के लिये हर्कत आ जायेगी, हर्कत में फिर बर्कत आ जायेगी और फिर मेरे जीवन में कोई भी बाधा आयेगी, रुकावट आयेगी तो उस को उखाड़ता पछाड़ता व पैरो तले रोन्दता हुआ सतत आगे ही आगे मैं बढ़ता जाऊँगा, ऊँचा ही ऊँचा मैं उठता जाऊँगा।

इस प्रकार मैं सब प्रकार से जब (दक्ष वृद्धौ शीघ्रार्थे च) दक्ष हो जाऊँगा, आगे बढ़ जाऊँगा, तो हर श्रेष्ठ कर्म के किये फिर मुझ में फुर्ती आ जायेगी, उत्साह आ जायेगा। और इसी फुर्ती और उत्साह के कारण फिर हर कठिन से कठिन और महान से महान कार्य मेरे लिये सरल हो जायेगा, सुगम हो जायेगा।

हे अद्वितीय पवित्रता के आदि स्त्रोत सर्वेश्वर! तेरी कृपा से पवित्र हो जाने पर मैं तब दीर्घजीवी होकर उत्तम जीवन व्यतीत कर सकूँगा। हे प्रभुदेव! अपने पुरुषार्थ और तेरी दया से पवित्र हो जाने पर निर्मल और निःस्वार्थ हो जाने पर ही मैं सच्चा अहिंसक बनकर सबके प्रति स्नेह— सहानुभूति का व्यवहार कर सकूँगा, सब की सेवा सहायता कर सकूँगा, सबका मान—सम्मान कर सकूँगा, सब को शुभ कामनायें और आशीर्वाद दे सकूँगा।

हे पवमान प्रभो! मैं पुरुषार्थ करता हुआ तुझ से प्रार्थना करता हूँ कि तू मुझे पवित्र कर ताकि मैं लोक में उपर्युक्त प्रकार से दिव्य जीवन व्यतीत करता हुआ अन्त में जगत् से विदा होकर भी तेरे पावन प्यार और आशीर्वाद का पात्र बन कर तुझ से यह दिव्य प्रसाद पा जाऊँ जिस के पाने के लिए यह आत्मा युग—युगान्तरों से, कल्प—कल्पान्तरों से भटक रहा है। प्रभो! मेरी प्रार्थना स्वीकार करो ओर मुझे निहाल करो।

गृहस्थ उत्थान के वैदिक उपाय

–स्वामी वेदानन्द सरस्वती जी, उत्तरकाशी

1. स्वस्ति पन्थामनु चरेम सूर्य चन्द्रमसाविव। पुनर्ददताघनता जानता संगमेमहि।

भावार्थ–हम सूर्य चन्द्रमा के समान ज्ञान के प्रकाशयुक्त मार्ग में ही निरन्तर आगे बढते जायें तथा ज्ञानी ब्राह्मणों, निरापराधी छत्रियों तथा दान दाता वैश्यों की ही निरंतर संगति मे रहें। धर्म भ्रष्ट व्यक्तियों से हमारा कोई सम्पर्क न रहे। स्वस्ति पथ पर ही हम सदा आगे बढ़ते जायें।

2. शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर।

भावार्थ–तुम लोग इतना पुरुषार्थ करो कि सैकडों हाथों से धन कमाओ तथा पैसे के ही लालच में न पड़ कर हजारों हाथों से दान देने की प्रवृति भी तुम्हारी बनी रहे। दान देना भी धर्म का ही एक उत्तम लक्षण है। सतपात्रों को ही दान करो।

3. अनुव्रतः पितुः पुत्रः मात्रा भवतु संमनाः। जाया पथे मधुमतीं वाचं वदतु शान्तिवान।

भावार्थ–उत्तम पुत्र को अपने पिता का सदा आज्ञाकारी होना चाहिए तथा माता के प्रति भी सम्मानकारी होना चाहिए। पत्नि को भी अपने पति के प्रति कभी कठोर वचन नहीं बोलना चाहिए सदा प्रिय वचन ही बोले।

4. मा भ्राता भ्रातरं द्विशन्मा स्वसारमुतस्वसा। सम्यचःसव्रता भूत्वावाचंवदतु भद्रया।

भावार्थ– उत्तम स्वभाव के भाई को अपने भाई से तथा बहन को अपनी बहन से कभी द्वेष नहीं करना चाहिए सब समान विचार वाले होकर उत्तम कर्म ही करें तथा सदा एक दूसरे से मीठी वाणी बोलें।

5. एशा वा अतिथिः यत्श्रोतिय तस्मात् पर्वो न अशिनीयात्।

भावार्थ– जो अतिथि वेद शास्त्रों का विद्वान आपके घर आता है उसका सम्मान करो उसको ही प्रथम भोजन खिलाकर उसके पश्चात् आप लोग भोजन करो। इसी को अतिथि यज्ञ कहा जाता है। अतिथि यज्ञ करना भी उत्तम गृहस्थियों का कर्तव्य कर्म होता है।

6. इहैव अस्तं मावियौश्ठं विश्वमायुव्यश्नुतम्। क्रीडण्तौ पुत्रैर्नप्राभि मोदमानोव स्वभृहे।

भावार्थ– उत्तम गृहस्थ के पति–पत्नि के लिए वेद का उपदेश है कि पति–पत्नि दोनों जनों को प्यार से ही मिलकर रहना चाहिए कभी भी आपस के रिश्ते न तोड़े। पुत्र–पौत्रों के साथ आनंद पूर्वक व्यवहार से जीवन यापन करें। अपने परिवार की उन्नति के लिए सदा उत्तम व्यवहार करें तथा आपस में कोई विरोध नहीं होना चाहिए।

7. सम्राज्योधि भवशुरेशु सम्राज्युत देवृशु । ननान्दुः सम्राज्योधि सम्राज्युत भवश्रुवाः।

भावार्थ– उत्तम महिला का कर्तव्य होता है कि वह अपने पति के माता–पिता, भाई–बहन आदि इन सब के प्रति ऐसा धर्माचारण कर व्यवहार करें ऐसी मीठी वाणी बोलें कि जिससे उनके दिलों में विशेष सम्मान का स्थान उसके लिये सदा बना रहें। वे सब अपने दिलों का विशेष प्यार ही करते रहें। परिवार की उन्नति महिला के उत्तम व्यवहार पर ही निर्भर करती है।

8. सत्यं वृहदृतमुग्रै दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथ्वीं धारयन्ति।

भावार्थ–जिस परिवार के लोग उत्तम ज्ञान और उत्तम कर्म के अनुसार दीक्षित होकर सदा तप करते हैं तथा प्रतिदिन ब्रह्म यज्ञ का अनुष्ठान करते हैं वेदशास्त्रों को पढ़ते हैं वे इन उत्तम कर्मों से इस

पृथ्वी की ही रक्षा करते हैं। फिर यह पृथ्वी भी एक माता के समान उन परिवारों की सदैव रक्षा करती है। प्रातः सायं ईश्वर का ध्यान अवश्य करें इससे सब कष्ट दूर हो जाते है। ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, अतिथियज्ञ तथा बलिवैश्यदेवयज्ञ उत्तम गृहस्थ के अनिवार्य कर्तव्य होते हैं।

9. ममवृतं ते ह्रदयं दधामि। मम चितं अनु चितं ते अस्तु। मम वाचं एक मना जुशस्व, प्रजापति त्वा नियुनकु मह्म्।

भावार्थ– विवाह संस्कार के समय पति–पत्नि दोनों एक दूसरे से कहते हैं कि मैं अपने सत्य आदि व्रतों को आपके ह्रदय में भी धारण कराता हूँ। मेरा सोच विचार आपके सोच विचार का भी ध्यान रखेगा। हम दोनों एक दूसरे की बात को ध्यानपूर्वक सुनेंगे। हमारा ये पति–पत्नि का जोडा परमात्मा की कृपा से ही सम्मलित होता है। हमें उसकी आज्ञा का पालन करना ही चाहिए।

10. सामान्य गृहस्थी पति–पत्नि प्रजनन मात्र से सामान्य सन्तान को ही जन्म देते हैं देवी सन्तान का जन्म सद्ज्ञान और उत्तम संस्कारों से ही होता है। उसके लिये यज्ञ आदि पवित्र कर्म तथा वेद आदि शास्त्रों का पठन–पाठन आवश्यक होता है। इनका पालन करें। ये उत्तम गृहस्थियों के वैदिक कर्म कर्तव्य हैं।

वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले दानदाताओं की सूची दिनांक 1 दिसम्बर 2018 से 31 मार्च 2019 तक

क्र.स.	नाम	धनराशि	क्र.स.	नाम	धनराशि
1	हंस राज वेद प्रकाश दत्ता ट्रस्ट, देहरादून	15000	17	श्री राजीव कुमार जी, देहरादून	5100
2	श्री राजीव नांगिया जी, देहरादून	200000	18	श्री एस०के० माटा० जी, देहरादून	1000
3	श्रीमती सोनिया ग्रोवर जी, नई दिल्ली	2000	19	श्रीमती अल्का गुप्ता जी, लुधियाना पंजाब	50000
4	श्री एच०सी० अरोडा जी, नई दिल्ली	2000	20	श्री रमेश चन्द्र गुप्ता जी, देहरादून	1100
5	श्री हिमांशु जी(माता लीलावती जी) तपोवन	1100	21	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
6	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000	22	श्री जी०पी० भल्ला जी, नई दिल्ली	5001
7	श्रीमती माया जी, हरियाणा	1100	23	श्री राहुल जी, देहरादून	1000
8	श्री संतोष द्विवेदी जी, देहरादून	2000	24	श्री नरेन्द्र गोयल जी, देहरादून	5000
9	श्री प्रभुदत्तनन्दलाल जी, मॉरीशस	4000	25	श्री अशोक कुमार जी, देहरादून	3000
10	श्री सूरज प्रकाश चावला जी, बैंगलौर	21000	26	कु० सौम्या पाहवा जी, नई दिल्ली	4000
11	श्रीमती रेणू शाह जी, देहरादून	1000	27	श्री संदीप पाहवा जी, नई दिल्ली	2000
12	श्री अभिनव स्वरुप जी, नई दिल्ली	1500	28	श्री उमेश चन्द्र मैनाली जी, देहरादून	1200
13	श्री भीम सिंह जी, देहरादून	3100	29	स्व० श्री दानचन्द जी, देहरादून	2000
14	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000	30	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
15	ब्रिगेडियर एस०के० अम्बा जी, नई दिल्ली	11000	31	श्री गिरीश मुनि जी, गाजियाबाद	4500
16	डा० सुधीर गोजे जी, तेलंगाना	100000	32	श्रीमती ईश्वरी देवी जी, देहरादून	3100

वैदिक साधन आश्रम तपोवन को दान देने वाले दानदाताओं की सूची दिनांक 1 दिसम्बर 2018 से 31 मार्च 2019 तक

क्र.स.	नाम	धनराशि
33	श्री श्यामसुन्दर सोनी जी, हरियाणा	15000
34	श्री भुपेन्द्र जी, हरिद्वार	2100
35	श्री दर्शन कुमार अग्निहोत्री जी, नई दिल्ली	2000
36	श्री वेद मिंगलानी जी, नई दिल्ली	2000
37	श्री शौर्य मिंगलानी जी, नई दिल्ली	2000
38	श्री अथर्व मिंगलानी जी, नई दिल्ली	2000
39	श्री आकर्ष मिंगलानी जी, नई दिल्ली	2000
40	श्री वरुण कुकरेजा जी, नोयड़ा	2000
41	श्री आशीष मिंगलानी जी, नई दिल्ली	2000
42	श्रीमती पुनीता चौधरी, नई दिल्ली	10000
43	श्री वेद मुनि जी, हरियाणा	2100
44	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	10000
45	श्रीमती सत्यावती नांदल जी, रोहतक	2100
46	श्रीमती जगवती चौधरी देहरादून	2100
47	श्री ब्रह्मपाल जी, रुड़की	2100
48	श्री ब्रह्म मुनि जी, रुड़की	1500
49	श्रीमती गीता गोयल जी, नई दिल्ली	1100
50	श्री विनेश आहूजा जी, नई दिल्ली	10000
51	श्री ऋषि आहूजा जी, नई दिल्ली	2000
52	रचना आहूजा जी, नई दिल्ली	2000
53	रुपाली आहूजा जी, नई दिल्ली	2000
54	श्री बोधराज जी, चाँदपुर	2100
55	श्री इन्द्रजीत मल्होत्रा जी, देहरादून	50000
56	श्री प्रेमचन्द्र जी, उ०प्र०	1100
57	श्रीमती ऊषा राजपूत जी, हरिद्वार	1000
58	श्री प्रेम प्रकाश शर्मा जी, देहरूादन	2000
59	श्री के०के० आर्या जी, देहरादून	1000
60	श्रीमती अरुणा गुप्ता जी, देहरादून	2100
61	श्री निर्मल मदान जी, नई दिल्ली	30000
62	श्रीमती सुरेन्द्र अरोड़ा जी, देहरादून	5000
63	श्री आई०जे० गिरधर जी, फरीदाबाद	2000
64	श्रीमती किरण गाँधी जी, फरीदाबाद	1100
65	श्री स्वराज घई जी, गुरुग्राम	1000
66	श्रीमती संगीता विज जी, गुरुग्राम	1000
67	श्रीमती पूनम सोनी जी, गुरुग्राम	2000
68	श्री प्रवीण सोनी जी, गुरुग्राम	2000
69	श्री राघव सोनी, गुरुग्राम	1100
70	श्री एस०के० डूडेजा, फरीदाबाद	1100
71	श्रीमती भारती गुप्ता जी, फरीदाबाद	1000
72	आर्य समाज सैन्ट्रल, फरीदाबाद	1100
73	श्री कमलेश बैन्दा जी, फरीदाबाद	1100
74	श्री प्रेम खट्टर जी, फरीदाबाद	1100
75	श्रीमती सुशीला अरोड़ा जी, फरीदाबाद	2100
76	श्री दीपक वर्मा जी, फरीदाबाद	20000
77	श्रीमती शशि वर्मा जी, फरीदाबाद	2000
78	श्रीमती नीलम गिरधर जी, फरीदाबाद	2000
79	श्रीमती प्रोमिला महेन्द्रे जी, फरीदाबाद	2000
80	श्री रविकान्त अरोड़ा जी, दिल्ली	5000
81	श्रीमती भावना जी, दिल्ली	11000
82	श्रीमती संगीता कुमार, हैदराबाद	11000
83	श्री प्रेमबत्रा जी, लन्दन	5000
84	श्री कृष्णा आर्या जी, करनाल	5000
85	श्री कमलेश ग्रोवर जी, दिल्ली	3100
86	श्रीमती उमा कपूर जी, दिल्ली	3100
87	श्री महेश चोपड़ा जी, दिल्ली	3100
88	श्रीमती शशि कस्तूरिया जी, दिल्ली	3100

वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून सभी दानदाताओं का धन्यवाद करता है।

Delite KOM

freedom to work...

DELITE KOM LIMITED

All dimensions are subject to change without any prior notice because of continuous research & development. All designs shown here are proprietary: Any infringement is liable for prosecution.

DELITE KOM LIMITED

Kukreja House, IInd Floor, 46, Rani Jhanshi Road, New Delhi-110055

Ph. : 011-46287777, 23530288, 23530290, 23611811 **Fax :** 23620502 **Email :** delite@delitekom.com

ISO 9001 DNV CERTIFIED

डाक पंजीयन UA/DO/DDN/75/2018-2020

समाचार पत्र पंजीयन 51900/88

With Best Compliments From

MUNJAL SHOWA

हाई क्वालिटी शॉकर्स

- TPM Certified
- ISO / TS - 16949 - 2002 Certified
- ISO - 14001 Certified
- OHSAS - 18001 Certified

हमारे उत्पाद

- स्ट्रट्स / गैस स्ट्रट्स
- शॉक एब्जॉर्बर्स
- फ्रन्ट फोर्क्स
- गैस स्प्रिंगस / विन्डो बैलेन्सर्स

मुंजाल शोवा लिमिटेड भारत की प्रमुख शॉक एब्जॉर्बस बनाने वाली कंपनी है जिसकी रेंज फ्रन्ट फोर्कस, स्ट्रट्स (गैस चार्जड और कन्वेन्शनल) और गैस स्प्रिंगस की टू व्हीलर / फोर व्हीलर उदयोगों को उपलब्ध कराती है। कंपनी गुणवत्ता और सुरक्षा के उच्चतम मानकों के अनुरूप अपने सभी उत्पादों का निर्माण करती है। कंपनी के उत्पाद आरामदायक और सुरक्षित सवारी देते हैं और ये टिकाऊ और विश्वसनीय भी हैं। मुंजाल शोवा लिमिटेड, QS 9000, TS–16949, ISO 14001, OHSAS 18001 और TPM प्रमाणित कंपनी है। मुंजाल शोवा के तीन मैन्युफैक्चरिंग प्लॉट हैं – गुड़गॉव, मानेसर (हरियाणा) और हरिद्वार (उत्तराखण्ड)। मुंजाल शोवा लिमिटेड का शोवा कार्पोरेशन जापान के साथ तकनीकी और वित्तीय सहयोग करार है।

हमारे ख्यातिप्राप्त ग्राहक

Hero HONDA HONDA MARUTI SUZUKI YAMAHA

मुंजाल शोवा लिमिटेड

प्लॉट नं. 9–11, मारुति इंडस्ट्रियल एरिया
गुड़गॉंव–122015, हरियाणा
दूरभाष :
0124–2341001, 4783000, 4783100
ईमेल : msladmin@munjalshowa.net
वेबसाइट : www.munjalshowa.net

MUNJAL SHOWA

वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी के लिए प्रकाशक मुद्रक प्रेम प्रकाश द्वारा सरस्वती प्रेस, 2, ग्रीन पार्क, निरंजनपुर, देहरादून–248001 (उत्तराखण्ड) से मुद्रित एवं वैदिक साधन आश्रम सोसाइटी (रजि.), नालापानी, देहरादून (उत्तराखण्ड) से प्रकाशित। संपादक– कृष्णकान्त वैदिक शास्त्री

सरस्वती प्रेस, देहरादून, ई-मेल : akhilg333@gmail.com